RNI No. 7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City / 411 2023-25

संघशक्ति

मासिक समाचार पत्रिका

वर्ष : 62 अंक : 09 प्रकाशन तिथि : 25 अगस्त कुल पृष्ठ : 36 प्रेषण तिथि : 4 सितम्बर 2025
शुल्क एक प्रति : 15/- वार्षिक : 150/- रुपये पंचवर्षीय 700/- रुपये दस वर्षीय 1300/- रुपये

मीरा सी न तन्मयता तो विष को अमृत क्यों माने ।।

श्रीमान खेत सिंह जी मेड़तिया बोला गुड़ा के राजस्थान राजपूत परिषद मुंबई, महाराष्ट्र के अध्यक्ष बनने पर हार्दिक बधाई।

खेत सिंह जी मेड़तिया

–: शुभेच्छु :–

पाबूदान सिंह दौलतपुरा, कालू सिंह सालवा खुर्द, ईशवर सिंह जागसा,
नारायण सिंह पुरण, बहादुर सिंह भैंसड़ा, राजू सिंह केतु
महिपाल सिंह भुरटिया, विक्रम सिंह रोड़ा, परबत सिंह डूंगरी, रणवीर सिंह अर्जुनपुरा

संघशक्ति

4 सितम्बर, 2025

वर्ष : 62 अंक : 09

–: सम्पादक :–

राजेन्द्र सिंह राठौड़

–: शुल्क :–

एक प्रति : 15/- रुपये	वार्षिक : 150/- रुपये	पंचवर्षीय : 700/- रुपये	दस वर्षीय : 1300/- रुपये

विषय-सूची

- समाचार संक्षेप ✍ 04
- चलता रहे मेरा संघ ✍ श्री भगवानसिंह जी रोलसाहबसर 07
- पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में) ✍ श्री चैनसिंह बैठवास 09
- मेरे सोते हुए जीवन में.... ✍ श्री अजीतसिंह धोलेरा 12
- याद कर ✍ श्री भंवरसिंह देवगाँव 15
- नित्यमुक्त सिद्धात्मा-मीरांबाई मेड़तणी जी ✍ श्री राजेन्द्रसिंह राणीगाँव 16
- योग दर्शन ✍ सुश्री रश्मि रामदेरिया 20
- पठन, गुणन व अनुभूतिकरण ✍ श्री अड़िसालसिंह लोहरवाड़ा 22
- पारिवारिक रिश्तों की ढीली होती डोर ✍ डॉ. श्री मातुसिंह मानपुरा 23
- खेड़गढ़ के गोहिल राजवंश संबंधित.... ✍ श्री महेन्द्रसिंह छायण 25
- अपनी बात ✍ 31

समाचार संक्षेप

श्री क्षत्रिय युवक संघ के तृतीय संघ प्रमुख पूज्य नारायण सिंह जी की जयन्ती :– 30 जुलाई को गुजरात के सुरेन्द्र नगर स्थित शक्ति मंदिर में पूज्य नारायण सिंह जी की 85वीं जयन्ती का आयोजन किया गया। कार्यक्रम को संबोधित करते हुए संघ प्रमुख श्री लक्ष्मण सिंह बैण्याकाबास ने अपने उद्‌बोधन में कहा कि क्षात्रधर्म की विलुप्त परम्परा को पुन: स्थापित करने, साधारण व्यक्ति को असाधारण बनाने, संस्कारों से अशिक्षित को शिक्षित बनाने के लिए पूज्य तनसिंह जी ने श्री क्षत्रिय युवक संघ रूपी जिस विश्व विद्यालय की स्थापना की थी, पूज्य नारायण सिंह जी उसके प्रथम स्नातक थे उन्होंने अल्प आयु में ही शाखा के माध्यम से संघ का परिचय प्राप्त किया एवं उसके आकर्षण से ऐसे बंधे कि 19 वर्ष की आयु में संघ को अपना संपूर्ण जीवन समर्पित कर दिया तथा तनसिंह जी को अपना सर्वस्व मान लिया।

इसी क्रम में संघशक्ति भवन जयपुर में भी श्रद्धेय नारायणसिंह जी रेड़ा की जयन्ती मनाई गई। यहाँ संघ के वरिष्ठ स्वयंसेवक श्री महावीर सिंह सरवड़ी ने कहा कि लगन, तत्परता, अनन्यता तथा एकनिष्ठता से सिद्धि प्राप्त होती है पूज्य नारायण सिंह जी इसके उदाहरण थे। इसके अतिरिक्त देश भर में 85 स्थानों पर जयन्ती कार्यक्रमों का आयोजन किया गया जिनमें शामिल होकर स्वयंसेवकों एवं समाज बन्धुओं ने उनके प्रति अपनी श्रद्धां एवं कृतज्ञता प्रकट की।

संघप्रमुख श्री के संभाग एवं प्रांतीय प्रवास के कार्यक्रम :– 20 जुलाई को बाड़मेर स्थित आलेक आश्रम में श्री क्षत्रिय युवक संघ की एक दिवसीय केन्द्रीय वार्षिक कार्य योजना की बैठक आयोजित हुई जिसमें संघप्रमुख श्री, केन्द्रीय कार्यकारी, संभाग प्रमुख व प्रान्त प्रमुख वर्ग ने भाग लिया तथा बीते वर्ष के कार्यों की समीक्षा एवं आगामी वर्ष की कार्य योजना पर चर्चा की गई।

इसी कार्यशाला में संघप्रमुख श्री ने सभी प्रान्तों एवं संभागों में प्रवास के कार्यक्रम तय किये। प्रथम प्रवास एवं संवाद कार्यक्रम के तहत 27 जुलाई से 4 अगस्त तक के कार्यक्रम आयोजित हुए।

27 जुलाई को सूरत शहर प्रवास के दौरान शहर की शाखाओं के स्वयंसेवकों से संवाद किया। इसी दिन गोडादरा विद्यालय में पारिवारिक स्नेह मिलन रखा। 28 जुलाई बड़ोदरा के मकरपुरा स्थित श्री राजपूत सभा भवन में कच्छ काठियावाड़ राजपूत एसोसिएशन एवं श्री राजपूत एसोसिएशन बड़ोदरा द्वारा आयोजित कार्यक्रम में भाग लिया। समाज बन्धुओं को संबोधित करते हुए आपने कहा कि सामाजिक एकता सुदृढ़ करने के लिए संगठित होकर कार्य करने की आवश्यकता है। बड़ोदरा से सड़क मार्ग द्वारा आणद पहुँचे एवं समाज बन्धुओं से संवाद किया। 29 जुलाई को काणेटी गाँव में मध्य गुजरात संभाग के स्वयंसेवकों की कार्यशाला आयोजित की गई। संघप्रमुख श्री ने स्वयंसेवकों से संवाद में कहा कि लिए गये कार्य लक्ष्यों की पूर्ति के लिए अनवरत कर्मशील रहें तथा इसका लेखा–जोखा रखने के लिये नियमित डायरी लिखें। 30 जुलाई को संघप्रमुख श्री सुरेन्द्र नगर पहुँचे। यहाँ स्वयंसेवकों एवं समाज बन्धुओं के साथ शक्ति मंदिर में पूज्य नारायण सिंह जी की जयन्ती आयोजित की गई एवं स्नेह भोज रखा गया। 31 जुलाई संघप्रमुख श्री ने जालौर संभाग के प्रवास पर सांचौर तथा रानीवाड़ा में प्रान्त के स्वयंसेवकों से संवाद किया। इसी दिन जालौर में पारिवारिक स्नेह मिलन का आयोजन किया।

1 अगस्त-पाली संभाग के प्रवास के दौरान खिंदारा गाँव स्थित खेड़ा देवी माता के प्राचीन मंदिर में दर्शन किया। मंदिर परिसर में ही स्नेह मिलन आयोजित किया जिसमें श्री क्षत्रिय युवक संघ एवं समाज पर संवाद हुआ। तत्पश्चात् मांडल में स्वयंसेवकों की बैठक आयोजित की गई जिसमें संघप्रमुख श्री ने संघ कार्य के विस्तार पर चर्चा की। उसी दिन सुमेरपुर के निकट खिवांदी गाँव में हाल ही में शहीद हुए फ्लाइट लेफ्टिनेण्ट ऋषिराज सिंह के आवास पर पहुँचे। शहीद को श्रद्धांजलि अर्पित की एवं परिवारजनों को ढांढस बंधाया। 2 अगस्त सिवाना प्रान्त के स्वयंसेवकों से पादरड़ी गाँव के अंजनी नगर में संवाद किया एवं सिवाना प्रान्त के संघ कार्यों की जानकारी ली। इसी दिन सिवाना नगर स्थित कल्ला रायमलोत छात्रावास एवं भगवती छात्रावास की शाखाओं के स्वयंसेवकों से भेंट की। तत्पश्चात् बालोतरा में वीर दुर्गादास छात्रावास में आयोजित कार्यक्रम में भाग लिया। 3 तथा 4 अगस्त को जोधपुर संभाग के प्रवास पर रहे जहाँ बालेसर (शेरगढ़ प्रान्त) बेदू (ओसियां प्रान्त), पीलवा (फलोदी प्रान्त) एवं जोधपुर स्थित संघ कार्यालय तनायन भवन में रखे स्नेह मिलन कार्यक्रमों में भाग लिया।

संभागों में प्रवास :- कार्यक्रम के अन्तर्गत द्वितीय चरण में 13 अगस्त को बीकनेर संभाग के श्री डूंगरगढ़ प्रान्त में आयोजित दुर्गादास जयन्ती समारोह में भाग लिया। कार्यक्रम का आयोजन रघुकुल छात्रावास में किया गया तत्पश्चात् झंझेऊ गाँव में स्नेह मिलन आयोजित किया गया जहाँ शाखा में आने वाले स्वयंसेवकों से संवाद किया। रात्रि विश्राम ''नारायण निकेतन'' संघ भवन बीकानेर में किया जहाँ स्वयंसेवकों से मिले। 14 अगस्त को पूगल प्रान्त के आशापुरा, देवासर एवं छतरगढ़ में कार्यक्रमों में भाग लिया। रात्रि विश्राम R.D. 465 में किया जहाँ संघ बन्धुओं से संवाद किया।

15 अगस्त 2 DM विजय नगर, 68 NP अनूपगढ़ में समाज बन्धुओं को संबोधित किया। इसी दिन घडसाना में स्नेह मिलन में समाज बन्धुओं से संवाद किया। इसी दिन नारायण निकेतन बीकानेर में सायंकाल में अधिकारियों, राजनेताओं व समाज बन्धुओं से मिले। 16 अगस्त बीकानेर शहर प्रान्त के स्वयंसेवकों से नारायण निकेतन में बैठक कर संघ कार्यों पर चर्चा की। श्री करणी कन्या छात्रावास की मातृशक्ति शाखा एवं विजय भवन बीकानेर की शाखा के बालकों से संवाद किया। इसी दिन संघ के वरिष्ठ स्वयंसेवक भवानीसिंह जी सुई एवं बजरंग सिंह जी रोयल से भेंट की।

17 अगस्त बीकानेर से प्रात: रवाना होकर देशनोक में करणी माता मंदिर का दर्शन किया। नोखा स्थित करणी राजपूत छात्रावास में आयोजित कार्यक्रम में भाग लिया। संघ के वरिष्ठ स्वयंसेवक कानसिंह जी धूंपालिया से मिलने उनके घर गये एवं कुशल क्षेम पूछी। तत्पश्चात् मोरखाना गाँव में मातृशक्ति शाखा में संवाद किया। संघ के स्वयंसेवक भंवरसिंह मोरखाना के आवास पर जाकर उनके पिता के निधन पर शोक व्यक्त किया। गुरुदेव अड़गड़ानन्द जी महाराज के स्थानीय आश्रम श्री बालाजी में जाकर संतों के दर्शन किये। इसी दिन नागौर में अमर राजपूत छात्रावास में दुर्गादास जयन्ती पर उद्‌बोधन दिया वहाँ से जयपुर पधारे।

संस्कार निर्माण शिविर :- 15 जुलाई से 18 अगस्त के मध्य श्री क्षत्रिय युवक संघ के संस्कार निर्माण शिविरों की श्रृंखला में 17 (चार दिवसीय) बालक वर्ग के शिविरों का आयोजन हुआ तथा एक शिविर मातृशक्ति वर्ग का हुआ। शिविर शिक्षण के अन्तर्गत सुप्त क्षात्र तेज का जागरण, शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक विकास, आचरण की श्रेष्ठता, सहयोग एवं संगठन द्वारा समाज सेवा करने का अभ्यास करवाया। इन शिविरों में 2240 शिवरार्थियों ने सहभागिता निभायी।

कार्ययोजना बैठकें :– श्री क्षत्रिय युवक संघ के कार्य विस्तार की योजना में आगामी वर्ष के लिए लक्ष्य तय करने व कार्ययोजना बनाने के लिये बालोतरा, पुणे, हैदराबाद, विजयवाड़ा एवं चित्तौड़गढ़ में संभाग एवं प्रान्त स्तरीय कार्य शालाएँ आयोजित की गई।

दुर्गादास राठौड़ की जयन्ती :– 13 अगस्त को दुर्गादास राठौड़ की जयन्ती के अवसर पर संघप्रमुख श्री ने बीकानेर संभाग के श्री डूंगरगढ़ शहर स्थित श्री रघुकुल छात्रावास में अपने उद्‌बोधन में कहा कि दुर्गादास राठौड़ सच्चे क्षत्रिय थे। शौर्य, तेज, धैर्य, कुशलता, संघर्षशीलता, त्याग एवं ईश्वरीय भाव की वे प्रतिमूर्ति थे। धर्म तथा राज्य की रक्षा के लिए अनवरत 30 वर्षों तक मुगलों से संघर्ष किया। आज समाज को दुर्गादास जैसे चरित्र की आवश्यकता है। उनके जैसे चरित्र का निर्माण करने का कार्य श्री क्षत्रिय युवक संघ 78 वर्षों से कर रहा है, आपने समाज बन्धुओं से योगदान करने का आह्वान किया। दुर्गादास जयन्ती पर जयपुर में आनुषागिक संगठन क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन ने कांस्टिट्यूशन क्लब के पृथ्वीराज चौहान सभागार में सर्व समाज का कार्यक्रम रखा। जिसमें विभिन्न समाजों के गणमान्य महानुभावों ने भाग लिया। यहाँ वक्ताओं ने दुर्गादास राठौड़ के महान कार्यों का स्मरण किया तथा दुर्गादास जी के अनछूये तथ्यों पर चर्चा की।

मीरां दर्शन यात्रा :– श्री क्षत्रिय युवक संघ के आनुषांगिक संगठन श्री क्षात्र पुरुषार्थ फाउण्डेशन ने तीन दिवसीय मीरां दर्शन यात्रा का आयोजन किया। 24 जुलाई को मेड़ता से आरम्भ कर बूढा पुष्कर पहुँची वहाँ से रवाना होकर जयपुर होते हुए 27 जुलाई को वृंदावन पहुँची। यात्रा के दौरान स्थान–स्थान पर यात्रा का स्वागत–वंदन किया गया तथा मेड़ता, पुष्कर, जयपुर एवं वृंदावन में स्नेह मिलन आयोजित कर भक्त शिरोमणी माँ मीरां की मूर्ति का पूजा–अर्चन किया गया।

अन्य :– महोबा, धानेरा, श्रीनाथद्वारा में कार्यशालाओं का आयोजन हुआ। फरीदाबाद, पांचोटा में मातृशक्ति ने मनाई हरियाली तीज। दिल्ली विश्वविद्यालय में मनाई महाराजा अनंगपाल तोमर की जयन्ती।

●

चरित्रशील पुत्र

पुत्र सुपुत्र वही जो करता, नित्य माता–पिता का मान।
तन–मन–धन से सेवा करता, सहज सदा करता सुख दान।।

भगवद् भक्त, जितेन्द्रिय, त्यागी, कुशल, शान्त, सज्जन, धीमान्।
जाति–कुटुम्ब–स्वजन–जनसेवक, ऋत–मि–हितवादी, विद्रान।

धर्मशील–तपनिष्ठ, मनस्वी, मितव्ययी, दाता, धृतिमान्।
पुत्र वही होता कुल तारक, फैलाता कुल–कीर्ति महान्।।

चलता रहे मेरा संघ

{मेवाड़ क्षेत्र के अपने प्रवास के समय माननीय भगवानसिंह जी (तत्कालीन-संघप्रमुख) द्वारा एक स्थान पर दिए गए उ्बोधन का संक्षेप}

अभी आप बन्धुओं ने स्वस्थ और स्वास्थ्य सम्बन्धित बातें प्रकट की। जब हम शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक रूप से स्वयं में स्थिर अथवा व्यवस्थित होते हैं, तब हम स्वस्थ होते हैं और स्वस्थ होने पर स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है। अत: स्वस्थ रहने के लिए व्यक्ति को संस्कारित होना आवश्यक है। तब प्रश्न उठता है कि व्यक्ति को संस्कार कहाँ से प्राप्त हो सकते हैं? संस्कारों का निर्माण जन्म के साथ ही प्रारम्भ हो जाता है। माता-पिता, परिवारजन के व्यवहार को बच्चा देखता है, उनसे गुणों की चर्चा सुनता है, बच्चे के व्यवहार में जो गलत स्वभाव बन रहा है उसको दूर किया जाता है। यह प्रारम्भ है, अत: परिवार का वातावरण अगर सद्संगत जैसा है तो अच्छे संस्कार बच्चों को मिलेंगे और यदि परिवार में ही परिवार जन ही बुरा आदतों वाले हैं तो सद्संस्कार नहीं मिल पाते। घर से बाहर बच्चा विद्यालय में जाता है, वहाँ जैसी संगत है उसी के अनसार बालक पर गुण अथवा अवगुण आते हैं। समाज में आज सद्संस्कारों को देने वाली एक मात्र संस्था श्री क्षत्रिय युवक संघ है। पूज्य तनसिंह जी द्वारा स्थापित श्री क्षत्रिय युवक संघ गाँव-गाँव, शहर-शहर इसी कार्य में कर्मरत है।

संघ की बात करने आज मैं यहाँ आया हूँ और आया नहीं बल्कि लाया गया हूँ। ऐसे कितने ही काम होते हैं जिन्हें आप करना चाहते हैं, पर उनमें से कितने हो पाते हैं? यदि थोड़ा विचार करें तो समझ में आएगा कि जो हम करना चाहते हैं वह नहीं होता, बल्कि वह होता है जो कोई करवाता है। यह अनुभूति हो जाए तो हम स्वस्थ हो सकते हैं। जैसे महाभारत में दुर्योधन ने कहा था कि मैं जानता हूँ कि मुझे क्या करना है, मगर मैं उस ओर प्रवृत नहीं हो पाता हूँ। इसी प्रकार हम सभी जानते तो हैं कि सद्संस्कार क्या होते हैं और कैसे प्राप्त होते हैं, मगर हम उस ओर प्रवृत नहीं हो पाते। इसका मुख्य कारण है मन का अस्थिर होना। मन पवन की गति की भाँति दौड़ता है और उस पर विजय, नियंत्रण का उपाय है अभ्यास और वैराग्य।

इस संसार में प्रत्येक व्यक्ति कहीं न कहीं आसक्त है, यह आसक्ति ही दुख का कारण है। इस आसक्ति से विरक्त होना ही वैराग्य है। वैराग्य का अर्थ न घर छोड़ना है, न किसी वस्तु को छोड़ना है, बल्कि किसी में भी कोई राग ना रहे तो सब ठीक हो जाएगा। अथवा वस्तु मिल जाए तो भी ठीक और न मिले तो भी ठीक। क्योंकि जो कुछ हो रहा है, वह परमेश्वर की कृपा से ही हो रहा है। यही भाव सदैव बना रहे, यही संतोष है और यह भाव बना रहे तो अनुभूत भी हो जाता है। यह स्थिति आती है अभ्यास से। अभ्यास से ही प्रयत्न पूर्वक संस्कार डाले जाते हैं, इसके लिए नियमितता और निरन्तरता आवश्यक है। बाहर के वातावरण का जो प्रभाव पड़ता है उसे रोकने के लिए भी मैं प्रयत्न निरन्तर रूप से करता रहूँ, यह भाव बनाए रखना है।

भगवान राम का राजतिलक होने की तैयारी की जाने लगी। राजा दशरथ ने मुहूर्त निकलवाकर राजतिलक करने की बात सबके सामने रखी। तब गुरु वशिष्ट बोले-जब इस राजतिलक को मैं स्वीकार करता हूँ, आप स्वीकार कर रहे हैं तो मुहूर्त की बात कहाँ रह गई। लेकिन राजा दशरथ ने शुभ कार्य किए जाने के लिए मुहूर्त की बात रख डाली और एक ही रात में सब कुछ बदल गया और रामायण बन गई। अत:

शुभ कार्य तो तुरन्त प्रारम्भ कर देना चाहिए, किसी बात का इन्तजार करना श्रेयस्कर नहीं।

अक्सर कहा जाता है कि आओ हम सब मिलकर फैसला करें। पूज्य नारायणसिंह जी रेड़ा कहा करते थे कि यह बात करना ही गलत है क्योंकि अच्छे फैसले सब के मिलकर करने पर नहीं होते। क्या महाराणा प्रताप ने सबसे मिलकर जीवन भर आधीनता स्वीकार न करना और स्वतंत्रता के लिए संघर्ष का फैसला लिया था? क्या वीर दुर्गादास, हाडी राणी, हठी हमीर ने सबसे मिलकर फैसला लिया था? पर आज वे ही लोग त्याग और बलिदान के उदाहरण बन सदा के लिए अमर हो गए। निर्णय स्वयं को तुरन्त ही करना चाहिए न कि सब मिलकर स्वयं के लिए कोई निर्णय बताएँ या किसी मुहूर्त का इन्तजार करें। शुभ कार्य तुरन्त कर देना चाहिए।

संसार में विभिन्न क्षेत्रों में, वर्गों में मजबूत कहे जाने वाले स्तम्भ भी ध्वस्त होते देख गए हैं। श्री क्षत्रिय युवक संघ में भी यदा-कदा ऐसा देखने को मिलता है। इसके पीछे कारण है-नियमितता और निरन्तरता में कमी। संपूर्ण संसार हमारे इतिहास को देख रहा है और मानता है कि ऐसा इतिहास अन्य किसी का नहीं है। ऐसे उज्जवल इतिहास के कारण हमारी कौम से बहुत अपेक्षा रखते हैं। इसलिए हमारा जागरूक रहना और क्षत्रियत्व को धारण करना आवश्यक है। इसी कौम ने भारतवर्ष को उज्जवल बनाया है, सभी का मार्गदर्शन किया है। आज सभी ओर से भारत की ओर नजर है और हमें यह कदापि नहीं भूलना चाहिए, इसलिए हम सच्चे क्षत्रिय बनें यह न केवल हमारी स्वयं की आवश्यकता है, यही समाज की आवश्यकता है। यही राष्ट्र की आवश्यकता है और यही पूरे मानव समाज की आवश्यकता है।

मैं कर नहीं रहा हूँ बल्कि मुझसे करवाया जा रहा है, ऐसा मैं अनुभव करता हूँ। आप भी ऐसा अनुभव कर सकते हैं, इसके लिए प्रयत्न किए जाने चाहिए। न कोई संस्कारित करता है, न कोई संस्कार देता है, बल्कि मुझे स्वयं को ही संस्कारित होना है यह बात स्वयं को ही तय करके निरन्तर और नियमित जाग्रत प्रयास करना है। किसी कार्य को करना है तो स्वयं को ही करना है और जो शुरू कर दिया जाए उसे कभी छोड़ें नहीं। जिस क्षण व्यक्ति स्वयं को सुखी करने का संकल्प लेता है, उसी समय से व्यक्ति सुखी हो जाता है अथवा संस्कार प्रारम्भ हो जाते हैं। अत: सदैव सीखने के लिए तैयार रहें, चलने के लिए स्वयं को मजबूत रखें। ●

इस देश में जो बड़े से बड़े धार्मिक लोग पैदा हुए थे वे सभी क्षत्रिय घरों से आए हैं। न तो ब्राह्मण पुत्र थे, न व्यवसायिक वणिकों के घर से आए। महावीर, बुद्ध, पार्श्व, राम, कृष्ण सभी क्षत्रिय घरों से आए। क्षत्रिय जुआरी हो सकता है। उसका गणित अलग ढंग का है। वह ब्याज के ढंग से नहीं सांचता, वह दान के ढंग से सोचता है। मरना-जीना उसे छलांग लगाने जैसा है।

- रजनीश

गतांक से आगे

पूज्य श्री तनसिंह जी (के सम्बन्ध में)

जो कुछ देखा, समझा व अनुभव किया

– चैनसिंह बैठवास

पूज्य श्री तनसिंह जी के मानस में उपजा एक नेक विचार, उनके हृदय में उपजा एक पवित्र भाव ही आगे जाकर श्री क्षत्रिय युवक संघ के रूप में, प्रचलित व विख्यात हुआ। श्री क्षत्रिय युवक संघ एक शिक्षण प्रणाली है। पूज्य श्री तनसिंह जी ने अपनी इस शिक्षण प्रणाली में **''सामूहिक संस्कारमयी कर्मप्रणाली''** को अपनाया। इस प्रणाली के माध्यम से श्री क्षत्रिय युवक संघ अपने शिविरों में असंस्कारी लोगों को संस्कारित कर उनको संगठित करने का कार्य करता है।

श्री क्षत्रिय युवक संघ पूज्य श्री तनसिंह जी की दिव्य संरचना है। इस संरचना के सृजन में दिमाग पूज्य श्री का, विचार पूज्य श्री के, हृदय में उपजा पवित्र भाव पूज्य श्री का, फिर भी कुछ लोग श्री क्षत्रिय युवक संघ का उपयोग यानी संचालन एक सलाहकार समिति के जरिये अपने हिसाब से करना चाहते थे, इसलिए उन्होंने पूज्य श्री तनसिंह जी के सामने सलाहकार समिति का प्रस्ताव रखा। यहाँ बात तो वो ही हुई, कटोरे में दूध रावला (ठाकुर साहब का), शक्कर रावली (ठाकुर साहब की), बारहठ जी का क्या? इसमें बारहठ जी का तो कुछ नहीं, बारहठ जी का आँगला (अंगुली) है, अंगुली से कटोरे में भरे दूध-शक्कर को घोलकर बारहठ जी दूध पीने का लुफ्त उठा रहे हैं। ऐसे ही संघ में कुछ लोग हो सकते हैं जिनका संघ की संरचना में कुछ भी श्रम, हिस्सेदारी नहीं। ऐसे लोग अनुशासनहीन, व्यक्तिश: जीवन जीने वाले होते हैं। उनका संघ से, संगठन से कोई लेना-देना नहीं। ऐसे लोगों के जीवन में संघ, संगठन का कोई मायना नहीं, वे तो अन्य सभी को अप्रतिष्ठित कर स्वयं प्रतिष्ठित होना चाहते थे इसलिए उन्होंने श्री क्षत्रिय युवक संघ को एक सलाहकार समिति के जरिये चलाने का प्रस्ताव पूज्य श्री तनसिंह जी के सामने रखा। पूज्य श्री तनसिंह जी ने उनके इस प्रस्ताव को सिरे से खारिज कर दिया।

पूज्य श्री तनसिंह जी ने बताया-

''श्री क्षत्रिय युवक संघ के प्रारम्भिक काल में मेरे कुछ साथियों ने आपत्ति उठाई, कि श्री क्षत्रिय युवक संघ का कार्य पंचायती से होना चाहिए, इसलिए हर साथी को अपना भविष्य सोचने की स्वतंत्रता रहनी चाहिए, पर मैं जानता हूँ, श्री क्षत्रिय युवक संघ पंचायती और समझौते से नहीं चल सकता और न श्री क्षत्रिय युवक संघ के लिये हमारे हृदय में जलने वाली आग ही पंचायती अथवा समझौते से जल सकती है। पंचायती के अधिकारों के बदले मैंने उन्हें अपना जलता हृदय दिया। कुछ भाग खड़े हुए, पर मैं उनके पीछे नहीं भागा-केवल श्री क्षत्रिय युवक संघ के लिए।

''कुछ समय व्यतीत हुआ और लोगों ने मुझ पर अधिनायक होने का आरोप लगाया। उन्होंने संशय प्रकट किया कि तुम कभी भूल कर सकते हो, इसलिए हम सबसे सलाह लेकर चलना ही सर्वाधिक रूप से निरापद है। मैं समझ गया, यह समाधान बुद्धि से नहीं हो सकता, केवल विश्वास से हो सकता है, जिसे उन्होंने बड़ी लापरवाही से आपस में ही ले देकर खो दिया।''

पूज्य श्री तनसिंह जी को जो संशय की दृष्टि से देखते थे, उन साथियों को पूज्य श्री ने जो कहा उन्हीं की जुबानी –

''मैं तुमसे कुछ नहीं चाहता, केवल एक ही बात चाहता

हूँ, अन्त:करण में मेरे प्रति विश्वास रखो, मैं आकाश के तारे तोड़ लाऊँगा। मैं याचक हूँ जो भगवान से सब कुछ आग्रहपूर्वक ला सकता हूँ पर मुझे यह नहीं सुहाता कि जिसके लिए यह सब कुछ किया जा रहा है, वही मार्ग का सबसे बड़ा बाधक बने।''

एक ऐसा ही स्वयंसेवक जो सलाहकार समिति का हिमायती, अनुशासनहीन और अविश्वासी, जिस पर पूज्य श्री तनसिंह जी ने कुछ ज्यादा ही भरोसा कर रखा था, उसने पूज्य श्री की धारणा पर पानी फेर दिया-उसका एक पत्र पूज्य श्री को मिला जिसके जवाब में पूज्य श्री ने उन्हें जो पत्र लिखा, उसके कुछ अंशों को यहाँ उद्घृत करने जा रहे हैं-

प्रिय.... बाड़मेर

जय संघशक्ति! 24.06.1949

आपका पत्र दिनांक 18.6.1949 न. 3 मिला। पढकर ख़ुशी हुई कि आप पास हो गए। आपने 'क' और 'ख' के विषय में लिखा है, सो प्रसंगवश यहाँ मुझे भी लिखना है। आपने लिखा है कि मार्ग प्रदर्शन करते रहें, गिर जाऊँगा तो दोष दूंगा। यह जले पर नमक छिड़कने का एक नया तरीका निकाला है।

तुमने और 'ग' ने सलाहों और मार्ग प्रदर्शन के कार्य से अपने आपको ऊपर उठा लिया है, अब हमारी क्या बिसात? आप दोनों के व्यवहार ने मुझे सिखाया कि मैं अब सम्पर्क में आने वाले प्रत्येक का विश्वास न करूँ, उसे सब प्रकार से परखने की कोशिश करूँ। शिविर के दृश्य आपको याद आते हैं और मैं भूलने का प्रयास करता हूँ। आप अपने मन में संघ के प्रति अपने आपको निष्ठावान समझते होंगे, किन्तु इस शिविर में तुमने और'ग' ने भयंकर गैर जिम्मेवारी का काम किया है। तुम्हारे मन में सोई हुई कमजोरी ने 'क' के हृदय में जमे हुए अहंकार की पुकार का उत्तर दिया। यदि तुम्हारे कमजोर मन ने कोई इमदाद न दी होती तो 'क' का इतना बढ-बढकर बात करना नहीं होता। क्या कारण था तुम्हारा 'क' के प्रस्ताव का समर्थन करने में। न्याय या सत्य का पक्ष! मूर्खराज! न्याय और सत्य को देखने के लिए सूक्ष्म दृष्टि चाहिए। स्थूल दृष्टि से देखा हुआ सत्य व न्याय भविष्य के गर्भ में अनेकों असत्य और अन्याय को जन्म दे सकता है।

'क' के प्रस्ताव पर तुम दोनों ने अपनी सम्मति दी, हाँ पूछकर तो करना चाहिए और सलाहकार समिति होनी चाहिए। तुम्हारी इस राय के साथ तुमने स्वयंसेवक के सारे गुणों पर पानी फेर दिया। क्यों तुम्हें अपनी दी जाने वाली राय पर बड़ा घमण्ड और विश्वास है? दूसरे के व्यक्तित्व के प्रति अविश्वास करना सीख गए! क्या मैं आज तक पूछकर कार्य नहीं करता हूँ? अनुशासन का मतलब है बिना बहस किए अधिकारी की आज्ञा मानना। वह संगठन ही क्या जिसमें अधिकारी को अपने मातहती में काम करने वाले 'कुछ' व्यक्तियों की अविश्वास पर उठने वाली राय के नीचे चलना पड़े। मैं अपनी ओर से कहता हूँ कि मेरी जगह कोई अन्य आओ और नमूना बताऊँगा कि किस प्रकार आज्ञा का पालन होता है।

तुम सिखाते हो कि आज्ञा पालन में किसी प्रकार की बहस नहीं होनी चाहिए, और खुद में भरी हुई इतनी अविश्वास की बू को कहाँ छिपाकर रखोगे? मैंने सदैव भरोसा किया अपने सहयोगी का। उसके लिए मेरे हृदय में बड़ा आदर था, लेकिन तुम लोगों ने मेरे उस आदर पर भयंकर ठोकर लगाई। एक गैर जिम्मेवार व्यक्ति के बहकावे में आकर तुमने संगठन के मूलभूत सिद्धान्तों में ही विद्रोह पैदा नहीं किया बल्कि संकल्प और प्रेम के सूत्रों में बंधे हुए अपने ही भाई के प्रति अविश्वास को प्रगट किया, जिस भाई के स्नेहमय हृदय में कभी किसी के लिए स्नेह की कमी नहीं मिली।

यदि मैं गलत रास्ते पर था, तो भी तुम्हें मेरा साथ देना था कारण कि यही संगठन की आवाज है। हम अपने विमत को क्या ठीक नहीं कर सकते? लेकिन तुमने एक उदाहरण रख दिया कि संघ की इस हरी भरी फुलवारी में विघटन की दवा किस प्रकार लग सकती है और अब ऊपर से कहते हो, मार्गदर्शन कराते रहना कहीं गिर गया तो दोष दूंगा। बड़ी विडम्बना है। यह तो सब कुछ होना भगवान को मंजूर नहीं था, नहीं तो संघ का दिखने वाला यह वैभवशाली महल एक गरीब की टपरिया से भी अधिक कंगाल बन जाता। मुझे 'क' और 'ख' के प्रति इतना क्षोभ नहीं, जितना 'ग' और तुम्हारे प्रति हुआ। 'क' के प्रति अविश्वास पैदा हो गया इसका कोई क्षोभ नहीं, 'ख' का अपना ही एक भूलों का इतिहास है और उनका जीवन ही एक बहुत बड़ी भूल है, किन्तु वह भूल आवश्यक है, अत: मुझे उनके प्रति कभी अविश्वास नहीं होगा। कारण यही कि वही एक ऐसा व्यक्ति है जिसने मुझे खूब अच्छी तरह पहचाना है और 'घ' एक विचारवान व्यक्ति है। भावना और स्नेह उनमें नहीं है किन्तु वे कर्त्तव्य को बहुत अच्छी तरह जानते हैं इसलिए वे बहुत कम गलती करते हैं। उस अवसर पर भी उन्होंने अपने आपको बचा लिया। रहे तुम दोनों जिन पर मुझे अपने आपसे भी ज्यादा भरोसा था, मुझे ऐसा विश्वास था कि मैं खुद मेरे विरुद्ध हो जाऊँ किन्तु ये दोनों और तीसरा 'ड' मेरे विरुद्ध कभी नहीं होंगे। तुमने मेरी उस धारणा पर पानी फेर दिया। संगठन का अर्थ भी यही है कि एक राय, एक मत। वह फौज, फौज नहीं जो अपने कमाण्डर की अल्पबुद्धि के लिए दुखित है और उसकी आज्ञा द्वारा करने वाले कामों पर उन्हें क्षोभ है, और वह कमाण्डर नहीं जिस बेचारे को अपनी फौज के कुछ जूनियर अफसरों की राय के बिना कदम उठाना बेजां है।

यह राय कार्य को सुचारू रूप से नहीं बल्कि कार्य का सर्वनाश करने के लिए थी। जिस समय सलाहकार एक बात पर जोर देते हैं और संचालक दूसरी बात पर जोर देते, तब क्या परिणाम होगा मालूम है? या तो सलाहकार नहीं और या संचालक नहीं। आवश्यकता पड़ने पर संघ की ऐसी दुर्दशा किसे मंजूर है? तुम को और 'ग' को। शेष फिर कभी, आज इतना ही।

(क्रमश:)

तप– **शरीर की साधना का नाम है।**

ब्रह्मचर्य– **मन की साधना का नाम ब्रह्मचर्य है।**

श्रद्धा– **मन या तो संकल्प विकल्प में उलझा रहता है या इनसे निकल कर किसी सत्य निश्चय पर पहुँच जाता है। संकल्प–विकल्प से तर्क की उलझन में से निकल कर सत्य की खोज के लिए डट जाने का नाम श्रद्धा है।**

– महर्षि पिपलाद

अर्थबोध

मेरे सोते हुए जीवन में....

– अजीत सिंह धोलेरा

विश्व द्वन्द्वात्मक है। अर्थात् विश्व में दो परिबल निरन्तर रूप से एक दूसरे के साथ संघर्ष करते रहते हैं। दैवी व आसुरी, सज्जन और दुर्जन, स्वार्थ व परमार्थ, ज्ञान व अज्ञान, त्याग व भोग आदि। ये दोनों परस्पर शत्रुभाव रखते हैं और दोनों के बीच युद्ध चलते रहते हैं। उसमें प्रारम्भ में हमको आसुरी, दुष्टजन या स्वार्थी लोगों की विजय होती दिखती है, क्योंकि उनमें पाशव बल अधिक होता है और वे स्वभाव से ही युद्ध प्रेमी होते हैं। किन्तु अन्त में 'सत्यमेव जयते' विजय तो सत्य की, सज्जनों की, ज्ञान की ही होती है। यद्यपि ऐसी विजय पाने से पहले सत्य को, न्याय को, धर्म को, सन्त व सज्जन को बहुत ही सहन करना पड़ता है, बलिदान देना पड़ता है।

प्रत्येक युग के काल देवता ऐसे संघर्षों में दैवी पक्ष को, सज्जनों की सहायता करने के लिए और आसुरी परिबलों को पराजित करने के लिए लोगों का आह्वान करते रहते हैं। इतिहास साक्षी देता है कि और कोई इस आह्वान को झेले या नहीं झेले क्षत्रियों ने इस आह्वान को झेला है और न्याय, नीति, धर्म आदि दैवी गुणों की रक्षा के लिये अपने सर्वस्व का बलिदान दिया है। ऐसा करना क्षत्रियों ने अपने जीवन का सार्थक्य माना है।

आसुरी शक्ति को हराने के लिए, झुकाने के लिए, मारने के लिए, ऐसा संघर्ष करने के लिए आज भी क्षत्रिय को आह्वान है ही। किन्तु दुर्भाग्य से समाज में शायद ही कोई इस आह्वान का सकारात्मक जवाब देता है। कारण यह है कि या तो मोह-माया की डी.जे. साउण्ड में इस आह्वान की पिपीहरी सुनाई नहीं पड़ती, और यदि सुनते भी हैं तो सदियों से क्षत्रिय कर्तव्य-विमुख बनकर संकुचित, वैयक्तिक जीवन में इतना गहरा डूब गया है कि वहाँ से बाहर आ ही नहीं सकता।

पूज्य तनसिंह जी जैसे इने-गिने कुछ महात्माओं को काल का ऐसा आह्वान जरूर सुनाई पड़ा क्योंकि वे होश में जी रहे थे। समाज की वास्तविक परिस्थिति से वे सुपरिचित थे और यह परिस्थिति उनको असह्य लगी। उन्होंने देखा कि विश्व की सुख-शान्ति व समृद्धि के लिए सदा जागृत रहने वाला, बलिदानी क्षत्रिय समाज आज अज्ञानता की काली रात्रि में घोर निद्रा में सोया पड़ा है। फलत: पृथ्वी चारों ओर से नीच लोगों से आवृत हो गई है। सर्वत्र दुर्जनों का शासन चल रहा है। हरामखोर का अट्टहास निराधार व असहायजनों के कलेजे को कम्पा रहा है। सारा मानव समाज विवश होकर क्षत्रिय की ओर आशा की नजर से देख रहा है, क्योंकि भूतकाल में जब-जब ऐसी दुखद, असह्य परिस्थिति सृजित हुई थी तब क्षत्रियों ने ही लोगों को उससे मुक्त किया था। मगर आज, आज क्षत्रिय सो रहा है। अपना कर्तव्य भूल गया है। स्वधर्म से विमुख हो गया है। ऐसी असह्य परिस्थिति में अपने कर्तव्य के प्रति जागृत बनाने के लिए परमेश्वर से प्रार्थना करते गाया है-

मेरे सोते हुए जीवन में रणभेरी बजा देना।
फिर चाहे तो अरमानों की होली भी जला देना।।
वन में फूल खिले खिलकर जगत में प्रेम बरसाते।
हँसते हैं हँसी में फिर हस्ती को मिटा जाते।
अंधेरे में पड़े इस ज्ञान से मुझको सजा देना।।
मेरे सोते हुए जीवन...
घर में दीप जला जलकर जगत को दीप्त कर देता।
परवाना शमां पर चढके निज को खाक कर देता।
वह जलता वह मरता मुझे कुछ तो सिखा देना।।
मेरे सोते हुए जीवन...

अन्दर आग जली जलकर न पर्वत को तपाती है।
तभी झरने खलकते और हरियाली सुहाती है।
भभकने की प्रतीक्षा में मुझे सहना सिखा देना।
मेरे सोते हुए जीवन में रणभेरी बजा देना।।

मेर सोते हुए जीवन में रणभेरी बजा देना। हाँ, मैं एक क्षत्रिय, राम और कृष्ण की संतान, प्रताप, शिवा व दुर्गा का वारिस। पर आज मैं सो रहा हूँ। कई पीढियों से सो रहा हूँ। अलबता समय-समय पर मुझे जगाने के प्रयत्न जरूर हुए हैं। थोड़ी देर के लिए लगा कि क्षत्रिय अब जग गया है। उदाहरण के रूप में.....गुजरात में मोरवी राज्य के प्रात: स्मरणीय हरभमजी राज ने समाज को झकझोरा। सन् 1906 में आम राजपूतों की श्री कृच्छ काठयिवाड़ गुजरात गरासिया (राजपूत) एसोसिएशन की स्थापना की जो आज भी सिर्फ नाम से जीवित है। मगर थोड़े समय के बाद घड़ी-दो-घड़ी थोड़ी अंगड़ाई लेकर करवट बदलकर समाज सो गया।

पूज्य तनसिंह जी इस तरह समय-समय पर क्षत्रियों को जगाने की प्रक्रिया से अच्छी तरह से वाकिफ थे। आपश्री जान गये थे कि क्षत्रिय को जगाने पर वह जरूर जग जाता है, परन्तु जाग कर जगता रहे, खड़ा हो जाए, चलने लगे, प्रवृति में लग जाए, सतत् सक्रिय बना रहे, उसके लिए निरन्तर और निश्चित प्रयत्न होने चाहिए। केवल हलबलाकर क्षत्रिय को जगाया नहीं जाता। उसके लिए उसको स्वधर्म का परिचय कराना पड़ेगा। उसको बताना पड़ेगा कि यदि क्षत्रिय आज जगता नहीं है तो आने वाले काल में समाज की संभावित अवदशा, दुर्दशा का अवलोकन करना पड़ेगा।

फिर चाहो तो,....इस तरह जगे क्षत्रिय में अरमानों की होली भी जला देने की प्रार्थना की है। अर्थात् उसे समझा देना पड़ेगा कि जिन्दगी में तुम्हें बहुत कुछ करना है, उस कर्तव्य कर्म को करते हुए तुम्हें सांसारिक अरमानों से मुक्त होना पड़ेगा, जला डालना पड़ेगा। अब तुम्हारे अरमान होंगे अपने पूर्वजों की राह पर चलने के, स्वधर्म का पालन करने के, जीवन को सार्थक करने के। इसके लिये चादर ओढकर, करवट बदलकर सो नहीं सकता। निरन्तर होश में दक्ष रहकर संघर्षों से भिड़ना पड़ेगा।

पूज्य श्री ऐसे संघर्ष और बलिदान भरे जीवन के प्रेरक उदाहरण देते हैं- वन में फूल खिले-वन में, जंगल में नाना प्रकार के फूल खिलते हैं। किसके लिए? किसी के लिए नहीं, बस खिलना अपना सहज स्वभावगत कर्म है। खिलने में ही वह अपना जीवन सार्थक हुआ मानता है। फूल खिलता है, भंवरे, मधुमक्खियाँ उनका रस चूसते हैं। चूसने दो। चुसाने के लिए ही तो है उसका रस। चूसा दो, लुटा दो, ले जाने दो। उसमें ही फूल को आनन्द है। ज्यों-ज्यों रस चूसाता जाता है, फूल 'हंसते हैं' और हंसी में फिर हस्ती को मिटा जाते। फूल गिर जाता है, हस्ती, अस्तित्व ही मिट जाता है। फूल के जीवन का यह प्रेरणादायी जो ज्ञान है, उसे प्राप्त करने की प्रार्थना गाई है। पूज्य श्री तो फूल का जीवन जी गए। मेरा भी यही संकल्प हो कि मैं भी फूल की तरह खिलूं, मेरा सब कुछ लोग ले जाएँ और हल्का निर्बोझ बनकर संसार से मैं जाऊँ।

पूज्य श्री कहते हैं कि एक पुष्प कितना सिखाता है। वन में एकान्त में खिला हुआ फूल, अपना जीवन रस चुसाता फूल। न किसी से कदर की, वाहवाही की, धन्यवाद की परवाह। कोई इसको देखता है या नहीं, उसकी हस्ती की कोई जानकारी भी लेता है या नहीं, बिना इसकी चिन्ता किये बस खिलना, अपना जीवन सत्व (रस) दूसरों के हित में अर्पित करना और जीवन जी जाना। इसको ही जीवन माना जाता है।

जबकि वर्तमान समय में क्षत्रिय की मानासिकता तो ऐसी है कि थोड़ा थोड़ा-सा देकर, थोड़ा-सा करके, जैसे समाज पर बड़ा उपकार किया हो, बदले में धन्यवाद की, फूल हार की, छोटे-बड़े पद की, सामयिकों में, अखबारों में अपने नाम व तस्वीर की आशा रखते हैं। एक उक्ति है न कि 'निटाई की चोरी

और सुई का दान, देखें आसमान में क्या आ रहा है विमान?'' और ऐसी कोई अपेक्षा फलीभूत नहीं होती तो समाज को भांडने लगते हैं कि हमने इतना किया, इतना सारा दिया पर समाज को कहाँ कदर है? जैसे कदर करवाने के लिए ही दिया-किया हो। वे भूल जाते हैं उस फूल का जीवन।

पूज्य श्री एक दूसरा उदाहरण देते हैं पतंगे का। घर में दीप जलता है और चारों ओर प्रकाश फैलाता है। दूसरों को प्रकाश देने के लिए दीपक को जलना ही चाहिए। जलने के लिए, जलता रहने के लिए अपने भीतर पड़े तेल को सुलगाना ही पड़ता है। यदि दिया जले ही नहीं, अपने तेल को अपनी सम्पत्ति मानकर उसको बचाए रखकर बैठा रहे तो यह दिया दिया ही नहीं कहलाता। वह तो केवल मिट्टी का सकोरा ही है, जो कभी भी किसी के पांव तले कुचला जाकर चूरा बनकर मिट्टी में मिल जाएगा। कर्तव्यच्युत दिया जलने को राजी नहीं होता, वह मूल्यहीन सकोरा ही है।

आगे कहा गया है-'परवाना शमा पर चढ के....' यदि दिया अपने कर्तव्य को स्वीकार करके जलता है तो कई पतंगे उस दिये की शमा अर्थात् ज्योत पर अपनी कुरबानी देकर भष्म हो जाएंगे। पतंगों को ऐसे बलिदानों से क्या मिलता है? कुछ भी नहीं जिसको हम मिला हुआ फायदा मानते हैं। मगर जिस तरह दिया कुछ पाने के लिए जलता नहीं, उसी तरह पतंगा भी किसी से कुछ पाने की अपेक्षा से जलता नहीं है। जहाँ दिये का प्रकाश होगा, वहाँ पतंगे सहज भाव से उड़ आते हैं, उस ज्योत के प्रति अपना लगाव होने से अपना कर्तव्य समझकर उस ज्योत पर जलकर मर जाते हैं।

पूज्य तनसिंह जी कहते हैं कि दिया जलता है, पतंगे उस पर जलकर मरते हैं, उससे मुझे बहुत कुछ सीखने को मिला। आपश्री की चाह है कि एक क्षत्रिय के रूप में मुझे भी जलते रहना है। दूसरों की पीड़ा से, समाज की दुर्दशा से, मानवता की विवशता से मैं सुलग जाता हूँ। मेरा धर्म मुझे समाज की, मानवता की ऐसी स्थिति में शान्त, निष्क्रिय बैठे रहने की या स्वार्थ में मग्न रहने की मना करती है। परिस्थिति का आह्वान है कि खड़े हो जाओ, जलने लगो, तुम्हारी भोगवृत्ति, कामना, अहंकार, स्वार्थ जैसे दुर्गुणों को जलाकर जगत के अंधेरे, अज्ञान को दूर कर। और यदि तुम ऐसा करोगे तो कई पतंगे अपना सर्वस्व भष्म कर देने को बिना न्यौता तुम्हारे पास दौड़ते-दौड़ते आएंगे। तुम्हें उनके अहं को, उनके व्यक्तिवाद को, उनकी भौतिक प्राप्ति की इच्छाओं को समाज हितार्थ जला डालना है।

और पूज्य श्री ने सचमुच ऐसा अनुभव किया। ज्यों ही समाज की खातिर जलने का स्वीकार किया, अपने जीवन कर्तव्य का दीपक जलाया कि कई युवक अपने जीवन के भोग, विश्राम, स्वार्थ, धन आदि को, स्वाहा कर देने के लिए दौड़ के आने लगे थे और आज भी उनके जलाए हुए यज्ञ 'श्री क्षत्रिय युवक संघ' के लिए अपने सर्वस्व की आहुतियाँ दे रहे हैं। ऐसा करने में वे अपने को धन्य मानते हैं। बन्धुओं! बहुत एकत्रित करने से मिलने वाले सुख को आप अनुभव कर रहे हैं। एक बार लेकर नहीं, देकर मिलने वाले दैवी सुख का अनुभव भी करना चाहिए। श्री क्षत्रिय युवक संघ इसके लिए आपका आह्वान कर रहा है। आपकी प्रतीक्षा कर रहा है।

तीसरा उदाहरण देते हुए पूज्य श्री पर्वतों के पेटे में जल रही आग की बात करते हैं। वह सुसुप्त ज्वालामुखी है। पर्वत के नीचे लावा रस उबलता रहता है। पहाड़ उस आग को शान्ति से सह लेते हैं और इनकी पीठ पर छोटे-मोटे जिर्झर कल कल बहते रहते हैं। शान्तिदायक, मनमोहक हरियाली, खेत, मैदान झूलते रहते हैं। संतों का जीवन कुछ ऐसा ही होता है। वे समाज की पत्नोन्मुखी, स्वधर्म विरुद्ध परिस्थिति से जल रहे होते हैं। मगर उसकी वेदना को भीतर ही छिपाकर बाहर से वे प्रसन्न वदन रहकर संसार के सभी व्यवहार करते हैं। उनके सान्निध्य में लोग शान्ति का अनुभव करते हैं। अपने

दुख, दर्द, कमजोर होते अनुभव होते हैं। परन्तु इस तरह सहन करने की भी एक सीमा होती है और एक समय ऐसा आता है कि सभी मर्यादाएँ टूट जाती हैं। तब अन्दर की आग ज्वालाओं के साथ बाहर भभक उठती है। उस वक्त चारों ओर जबर परिवर्तन देखने को मिलता है। समाज में, जीवन में एक क्रान्ति आती है।

पूज्य तनसिंह जी कहते हैं कि समाज की साम्प्रत पतन-मुखी दुर्दशा से अपने अन्तर में असह्य आग जल रही थी। यद्यपि मेरा बाह्य जीवन साधारण ही था पर वह मेरा सही स्वरूप नहीं था। मैं भीतर से कुछ अलग ही था और एक दिन 22 दिसम्बर सन् 1946 को वह आग श्री क्षत्रिय युवक संघ के रूप में बाहर भभकती आ गई। समाज में एक हलचल शुरू हो गई। श्री क्षत्रिय युवक संघ पूज्य श्री की भीतरी पीड़ा का मूर्त स्वरूप है। संघ एक रचनात्मक कार्यक्रम है, समाज जागृति का यज्ञ है।

हमारा, जागृत क्षत्रिय का पवित्र कर्तव्य है कि हम संघ अर्थात् पूज्य श्री की पीड़ा को समझें, उसको स्वीकार करें, अर्थात् हम भी पूज्य श्री की तरह पीड़ित बनें, समाज स्थिति से व्यथित बनें। पूज्य श्री ने अपने सर्वस्व का बलि देकर समाज जागृति का जो यज्ञ प्रज्वलित किया है, वह हमारे देखते-देखते ही, हमारी स्वार्थ वृत्ति, समाज विमुखता व अहंकार या प्रमाद वश शान्त न हो जाए, इसके लिए हम जल्दी हमारे पास जो कुछ है, बहुत-बहुत है, वह 'इदन्न मम्' मेरा नहीं है ऐसे भाव से स्वाहा कर दें। जीवन को सार्थक बना लें, जन्मदाता व जीवन के आधार परमेश्वर को रिझा दें, यही अभीप्सा।

●

याद कर

- भंवरसिंह देवगाँव

याद कर सांगा का संग्राम
याद कर राणा का संग्राम
उठा गर्व से अपने उर को
मत कर अब विश्राम
याद कर.....
आज समय का कृष्ण पक्ष है
बैरी तुझसे अधिक दक्ष है।
किंचित भी आलस्य मार्ग पर
देगा तुझे विराम
याद कर.....
हटा धूम्र छाया तब अम्बर
जो करना करना अपने कर
दर्प धूरि हटवाकर दर्पण
देखो मुख अभिराम
याद कर.....
क्या थे तुम क्या हुए आज हो
नित होते आखेट बाज हो
कब तक पुरखों की खावोगे
निकल गया क्या राम
याद कर.....
गरियाते हैं अदने अदने
सुमन सरीखे दुर्मुख वदने
तूकारा जो सह न सके थे
करते काम तमाम
याद कर.....
फर्क नहीं अब रक्त नीर में
नहीं तीर हैं अब तुणीर में
नग्न नाच सम्मुख होते को
कैसे करे सलाम
याद कर.....
मृत्यु तो आयेगी निश्चित
क्यों चिंता में है तू किंचित
तू ही तो था मोल न समझा
मस्तक का छिदाम
याद कर.....
ये जो है इतिहास खास
है तेरे पास सुवास
रख इसकी महिमा को अक्षुण्ण
रख रजपूती नाम
याद कर.....
ये जो है ना तंत्र परिष्कृत
करे तुझे जो नित्य तिरस्कृत
सब सत्ता व शक्ति क्रीड़ा ये
तनिक न ललित ललाम
याद कर.....
पूजा कर महिषासुर मर्दिनी
शुभ वसन वीणा मृदु वदनी
विष्णुप्रिया का वरद हस्त पा
सतत कर्म अविराम
याद कर.....
एक बात बैठा ले हिय में
गरल सरीखी घुली अमिय में
तू ओरों सा नहीं क्षुद्र है
पाना वृहद मुकाम
याद कर.....

इतिहास के झरोखे से

नित्यमुक्त सिद्धात्मा-मीरांबाई मेड़तणी जी

– राजेन्द्र सिंह राणीगाँव

सनातन धर्म में हम यह मानते हैं कि प्रत्येक जीव परमपिता परमेश्वर का ही अंश है। जो पूर्व जन्म के संचित कर्मों के प्रारब्ध को भोगकर मुक्ति की अवस्था में पुनः परमात्मा में विलीन हो जाता है। वि.सं. 1561 में राव दूदाजी के चौथे सुपुत्र रतनसिंह जी की सुपुत्री के रूप में जन्मी मीरांबाई ऐसी ही आत्मा थी। उन्होंने इस धरा पर जन्म से लेकर वि.सं. 1621 में अपने आराध्य प्रभु श्री कृष्ण के 'द्वारिका' पुरी स्थित श्री विग्रह में समाहित होने तक 60 वर्ष की लौकिक यात्रा पृथ्वी पर पूर्ण की। इनके इस जीवन वृत का सम्यक अध्ययन करने पर उनके उज्जवल चरित्र एवं विलक्षण प्रतिभा सम्पन्न भक्त हृदय के दर्शन होते हैं। वे अपनी ऊर्ध्वगामी आध्यात्मिक यात्रा के अन्तिम पड़ाव को पूर्ण करने के लिए इस धरा पर आई थी तथा मुक्त होकर परमात्मा के साथ एकाकार हो गई।

वे एक राज कन्या के रूप में पैदा हुई तथा 1573 में मेवाड़ की भुवरानी के रूप में चित्तौड़ में प्रतिष्ठित हुई। उनका बचपन एवं युवावस्था वैभव एवं ऐश्वर्य से परिपूर्ण था परन्तु उनका व्यक्तिगत जीवन पूर्णतया भक्तिपूर्ण था। वे सांसारिक वैभव से दूर ही रहती थी तथा सात्विक जीवन यापन करती थी। वि.सं. 1578 में उनके लौकिक पति युवराज भोजराज जी, वि.सं. 1584 में उनके श्वसुर महाराणा सांगा एवं वि.सं. 1588 में महाराणा रतनसिंह जी द्वितीय के निधन तक चित्तौड़ के राजप्रासाद में उनके लिए भक्ति का अनुकूल वातावरण रहा। वि.सं. 1588 में महाराणा विक्रमादित्य जी के राज्यारोहण के साथ ही मीरांबाई के भक्ति मार्ग में असहनीय विघ्न, बाधाएँ उत्पन्न होने लग गई। महाराणा विक्रमादित्य ने प्रारम्भ से ही मीरांबाई के प्रति असहिष्णु व्यवहार रखा एवं अन्त में वे उनके प्राण हरण करने के लिए तत्पर हुए तथा अनेक प्रयास भी किये जिनकी चर्चा हम आगे करेंगे। सामान्य मानव के रूप में आश्चर्य की बात यह है कि एक के बाद एक प्राणघातक हमलों के उपरान्त भी मीरांबाई का व्यवहार अपने देवर महाराणा विक्रमादित्य के प्रति पूर्णतया संयमित एवं सहिष्णु ही नहीं अपितु वे उनकी मंगल कामना ही करती रहती थी। यह व्यवहार इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि मीरांबाई अत्यन्त उदार हृदय की स्वामिनी थी। उनका व्यक्तिगत जीवन लोक व्यवहार व वैभव के दिनों में जैसा था वैसा ही अत्यन्त कठोर परिस्थितियों में भी बना रहा। वे भक्ति के मार्ग पर सदैव अग्रसर होती रही अर्थात् निन्दा एवं स्तुति को उन्होंने समभाव से ही स्वीकार किया, सुख एवं दुःख उनको एक समान प्रतीत होते थे। श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय-2 के 56वें श्लोक में भगवान श्रीकृष्ण उद्घोषित करते हैं कि –

''दुःखेष्वनुद्विग्न मनाः सुखेषु विगत स्पृहः।
वीतरागभय क्रोधः स्थित धीर्मुनिरुच्यते।।''

भावार्थ– जो दुख से उद्विग्न न हो, सुख में अधिक प्रसन्न नहीं स्पृह मुक्त हो, जो वीतरागी हो वह ज्ञानी भक्त स्थितप्रज्ञ होता है।

यद्यपि उन्होंने बाह्यजगत को अपने सिद्धात्मा स्वरूप के बारे में कभी भी अपने मुखारविंद से कुछ नहीं बतलाया परन्तु उनके इस स्वरूप को दर्शन निम्न घटनाओं (जो उनके जीवन में घटित हुई) के माध्यम से दर्शन होते हैं–

विषपान :– हम यह जानते हैं कि महाराणा विक्रमादित्य

मीरांबाई के देवर थे तथा वे उनके भक्ति मार्ग के जीवन के घोर विरुद्ध थे अत: उन्होंने मीरांबाई के भक्ति के रूप से ही मृत्यु प्रदान करने हेतु अपने राजवैद्य से ऐसा तीव्र जहर तैयार करवाया जिसकी कुछ बून्दों से हाथी जैसा विशाल प्राणी का जीवन समाप्त हो सकता था। उस विष का प्याला भरकर दयाराम नामक पाण्डा के हाथों यह कहकर भिजवाया कि प्रभु श्री जगन्नाथ जी का चरणामृत आया है जो मीरांबाई के लिए है। मीरांबाई ने प्रसन्नता से उसे स्वीकार किया एवं अपने गिरधर गोपाल के आगे रखकर भजन गाया। भजनोपरान्त जब वे प्याले को उठाकर विष पीने लगी तो उनकी ननद उदय कुंवरी (उदांबाई) ने टोकते हुए कहा कि वे इसे न पीवें क्योंकि यह चरणामृत नहीं अपितु विष है। मीरांबाई ने सहजता से कहा कि यह तो श्री जी (राणाजी) ने चरणामृत भेजा है। उदांबाई ने पुन: प्रतिकार कर कहा कि यह विष है। अब मीरांबाई ने पुन: शान्त स्वर में कहा कि जब इसे भगवान के अर्पण कर दिया तो यह पात्र चरणामृत है। यह कहकर पूरा प्याला पी गई। उस विष का उन पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं हुआ।

राजवैद्य को जीवनदान :- मीरांबाई पर जहर के निष्प्रभावी होने को राणा जी ने यह माना कि विष को राजवैद्य ने सही नहीं बनाया। उन्होंने राजवैद्य को अपने समक्ष बुलाया एवं बचे हुए जहर को पीने के लिए विवश कर दिया। विष पीते ही वैद्य जी का देहान्त हो गया। राणा जी की बहिन उदांबाई अब मीरांबाई के स्वरूप को जान गई थी। अत: उन्होंने वैद्य जी के परिजनों के पास संदेश भेजा कि शव यात्रा मीरांबाई के महल की तरफ से ले जावें एवं मीरांबाई को वैद्य जी के साथ घटित घटना से अवगत करवावें। जब परिजन मीरांबाई के पास राजवैद्य के शव के साथ पहुँचे। वस्तुस्थिति को समझकर मीरांबाई ने भगवान से कातर स्वर में प्रार्थना की एवं बोली कि उनके कारण एक ब्राह्मण की हत्या हो गई इस पाप से तो अच्छा था प्रभु उन्हीं के प्राण ले लेते। मीरांबाई ने इकतारा उठाया और भजन (हरि तुम हरो जन की पीर।....दासी मीरां लाल गिरधर चरण कमल पर सीर।।) गाया। भजन समाप्ति तक राजवैद्य जीवित होकर बैठ गये। यह देख उनके परिवारजन एवं उपस्थित समुदाय ने मीरांबाई का आभार जताया, मीरांबाई ने कहा कि यह मात्र प्रभु की कृपा है उन्हीं का गुणगान करें।

राणा जी द्वारा मीरांबाई पर खड़ग प्रहार :- राणा विक्रमादित्य जी ने मीरांबाई के अनुचरों में अपनी गुप्तचरियों को भी नियुक्त कर रखा था जो उनकी दैनिक क्रियाकलापों से राणा जी को अवगत करवाती रहती थी। प्रभु भक्ति में लीन मीरांबाई रात्रि में भगवान श्रीकृष्ण से भावावेश में वार्तालाप करती थी। दासी ने मीरांबाई के शयन कक्ष में किसी पुरुष की आवाज सुनी तो तत्काल जाकर राणा जी को सूचित किया। राणा जी बदहवास अवस्था में हाथ में नग्न तलवार लेकर दौड़े हुए सीधे मीरांबाई के महल में चिल्लाते हुए पहुँचे। उन्होंने शयन कक्ष का दरवाजा खुलवाया एवं पूरे कक्ष का कोना-कोना छान कर बोले कौन पुरुष था यहाँ, वह कहाँ गया। मीरांबाई ने शान्त भाव से प्रत्युत्तर दिया कि वे तो संसार के स्वामी हैं तथा सब जगह उपस्थित हैं। परन्तु वे तलवार दिखाने से दर्शन नहीं देते हैं। राणा जी ने उन्मादी की भाँति मीरांबाई पर तलवार के अनेक वार किये। उन्हें लगा जैसे तलवार शरीर के पार नहीं अपितु हवा में ही चल रही है। वे इस चमत्कार को देखकर चिल्लाये और बोले कि मीरांबाई डाकिन है। जादूगरनी है तथा क्रोध में तलवार को वहीं फैंककर वापस चले गये। इस घटना से पूर्णतया अविचलित मीरांबाई ने तलवार प्रात: अपने परिचारक के हाथों राणा जी के पास भेज दी।

भूत-महल में मीरांबाई :- राणा विक्रमादित्य ने एक बार षड़यंत्र कर मीरांबाई को विषैले जन्तुओं के निवास वाले पुराने खण्डहरनुमा महल में धोखे से बन्द कर दिया। मीरांबाई की

दासियों ने जब इधर-उधर पुकार की तो काफी दिनों बाद मेवाड़ के प्रभावी ठिकाने सलुम्बर के रावत जी को इसकी सूचना दासी पुत्र बनवीर के माध्यम से मिली। रावत जी के प्रभाव एवं सम्मान को पूरा मेवाड़ जानता था अत: राणा जी ने रावत जी के मांगने पर खण्डहर भूतहा महल की चाबी उन्हें दे दी। रावत जी ने स्वयं महल का दरवाजा खोला तो सुखद आश्चर्य में रह गये। विषधरों से भरपूर उस निर्जन महल में मीरांबाई के चेहरे पर अपूर्व आभा एवं तेज दृष्टिगोचर हो रहा था। उन्होंने दूर से मीरांबाई को प्रणाम किया एवं दासियों को बुलाकर उनके निजी महल में भिजवाया। अनेक दिनों तक भूख एवं प्यास से पीड़ित होने पर भी मीरांबाई पूर्णतया स्वस्थ थी।

मीरां महल में नरभक्षी शेर :- अपने षड़यंत्रों को विफल होता देख राणा जी ने एक बार जंगल नरभक्षी शेर को जिन्दा पकड़वाकर मंगवाया, उसे 4 दिन भूखा रखकर एक दिन मीरांबाई के महल के निजी प्रवेश द्वार पर पिंजरे से मुक्त कर दिया। नरभक्षी को देखते ही सेविकाएँ डर के कारण कांपने लग गई। मीरांबाई ने उन्हें ढाढस बंधाया एवं स्वयं बाहर आकर बोली शीघ्रता से भगवान ''नृसिंह'' के स्वागत के लिए पूजा का थाल तैयार करो। परिचारिकाओं ने आज्ञा का पालन डरते-डरते किया। मीरांबाई ने कहा ''प्रभू नृसिंह पधारो'' शेर वास्तव में आगे बढा, मीरांबाई ने उसके तिलक किया शेर ने मस्तक झुकाकर तिलक लगवाया, मीरांबाई को सूंघा एवं वापस मुड़कर चला गया। कुछ देर बाद उसकी दहाड़ सुनाई दी। जो व्यक्ति उसे पिंजरे में लाये थे उनका शिकार उस शेर ने स्वयं कर लिया।

सांप का पिटारा :- एक बार मीरांबाई के प्राण हरण के उद्देश्य से राणा जी ने कुमकुम नामक दासी के साथ एक पिटारा (टोकरी) यह कहकर भेजी की उसमें भगवान का शालीग्राम विग्रह एवं पुष्पाहार मीरांबाई के लिए है। टोकरा प्राप्त कर मीरांबाई ने ऐसे उपहार हेतु राणा जी का आभार व्यक्त किया। परिचारिका को आदेश दिया कि टोकरी खोले। उसको खोलते ही दो भयंकर विषघर सर्प प्रकट हुए इस दृश्य को देखते ही वह परिचारिका बेहोश हो गई। मीरांबाई की दृष्टि पड़ते ही एक सर्प चलकर आया एवं उनके गले में कण्ठाहार के रूप में लिपट गया तथा हार के रूप में वास्तव में परिवर्तित हो गया। दूसरा सर्प टोकरे में ही शालिग्राम रूप में परिवर्तित हो गया। यह सब भगवान की लीला थी।

द्वारिकाधीश के श्री विग्रह में मीरांबाई समाहित :- उपरोक्त घटनाक्रम की पृष्ठभूमि में वि.सं. 1591 में मीरांबाई ने चित्तौड़गढ़ को सदा सदा के लिये छोड़ने का निश्चय कर लिया। वे लगभग 2 वर्ष अपने पीहर मेड़ता में रही। वहाँ से (मेड़ता पर जोधपुर की सेना के आक्रमण के कारण) वीरमदेव जी के साथ पुष्कर प्रवास पर चली गई। पुष्कर में कुछ अवधि तक रुककर वे प्रभु श्रीकृष्ण की लीला स्थली वृन्दावन धाम के प्रवास पर गई जहाँ लगभग 25 वर्ष तक वे भक्ति करती रही। वि.सं. 1619 में वे वृन्दावन से द्वारिका के लिए प्रस्थान कर गई। इस 25-30 वर्ष की अवधि में मेवाड़ एवं मेड़ता दोनों ही राजपरिवारों पर गहन संकट आ गया। मेवाड़ के महाराणा विक्रमादित्य की हत्या कर दासीपुत्र बनवीर ने राजगद्दी ग्रहण कर ली जिसको महाराणा उदयसिंह ने हटाया तब तक अकबर ने चित्तौड़ पर चढाई कर दी। महाराणा उदयसिंह जी को चित्तौड़ छोड़कर उदयपुर की ओर पहाड़ों में सुरक्षित स्थान के लिए प्रस्थान करना पड़ा। चित्तौड़ की रक्षा का भार दुर्गाध्यक्ष एवं मीरांबाई के बड़े पिता वीरमदेव जी के पुत्र जयमल जी को मिला उन्होंने व उनके बहनोई फत्ता जी तथा कल्ला जी रायमलोत ने अद्‌भुत वीरता का परिचय देकर चित्तौड़ की रक्षार्थ वीरगति प्राप्त की। मेड़ता पर भी आक्रान्ताओं का अधिकार हो गया था। ऐसे में किसी ज्योतिषी ने कहा कि भक्त शिरोमणी मीरांबाई को कष्ट पहुँचाने के कारण मेवाड़ की दुर्दशा हुई है। अत: वे यदि

वापस चित्तौड़गढ़ आना स्वीकार कर लें तो मेवाड़ एवं मेड़ता दोनों का भला हो सकता है। इसको ध्यान में रखकर मेड़तिया एवं सिसोदिया सरदारों का संयुक्त दल अपने-अपने पुरोहितों को साथ लेकर द्वारिका गया। दल के नायकों ने मीरांबाई से भेंट कर अपना गन्तव्य बतलाया। मीरांबाई अपनी आध्यात्मिक यात्रा के अन्तिम पड़ाव पर थी, एवं मुक्ति के द्वार तक पहुँच चुकी थी वे वापस जाना नहीं चाहती थी। पुरोहितों ने सविनय यह घोषणा कर दी कि या तो वे मीरांबाई को साथ लेकर जावेंगे अन्यथा द्वारिका में ही अनशन कर प्राणोत्सर्ग करेंगे। मीरांबाई के लिए यह गम्भीर दुविधा की स्थिति थी। उन्होंने पुरोहितों एवं सरदारों को प्रस्ताव दिया कि वे द्वारिकाधीश के मन्दिर में जाकर प्रभू को प्रणाम कर उनकी आज्ञा से अन्तिम निर्णय लेंगी। समस्त सरदार एवं पुरोहितगणों के साथ मन्दिर में गई। पुजारी उन्हें भली प्रकार जानते थे अत: उन्हें गर्भग्रह में जाकर प्रार्थना की छूट थी। शेष लोग बाहर खड़े रह गये। भगवान के श्री विग्रह के समीप शीश झुकाकर प्रणाम किया। अब मीरांबाई ने इकतारा उठाकर भजन गाया (साजन सुध ज्यूं जाणो त्यों लीज्यो।....मीरां के प्रभु गिरधर नागर मिल बिछुरन मत दीज्यो।।) अन्तिम पंक्ति मिल बिछुरन मत दीज्यो के पूर्ण होते ही मंदिर में अभूतपूर्व प्रकाश हुआ। श्री विग्रह से भगवान साक्षात प्रकट हुए मदिर के घण्टे घड़ियाल बजने लगे एवं मीरांबाई श्री विग्रज में ही समाहित हो गई। मात्र उनकी ओढनी का एक छोर विग्रह पर लटकता रह गया। घन्ट घड़ियाल शान्त हुए तो पुजारी जी ने भीतर कोई आवाज नहीं सुनी वे दौड़कर अन्दर गये गर्भ ग्रह में मीरांबाई नहीं थी। तत्काल मेवाड़ के राजपुरोहित एवं सरदारगण भी पुजारी जी की आज्ञा से गर्भग्रह में प्रवेश कर गये मीरांबाई कहीं नहीं मिली, वे भगवान के साथ एकाकार हो गई थी। सदैव भगवान के पास मुक्त अवस्था में पधार गई। जैसा श्रीमद्‌भगवद् गीता के 12वें अध्याय के 19वें श्लोक में भगवान ने घोषणा की है-

''तुल्यनिन्दा स्तुतिर्मौनी सन्तुस्टो येन केन चित्।
अनिकेत: स्थिरमतिर्भक्ति मान्मे प्रियो नर:।।''

भावार्थ- जो निन्दा एवं स्तुति को समभाव से लेता है जो थोड़े से सन्तुष्ट हो जाता है, जो अनिकेत हो स्थिर मति वाला हो ऐसा भक्त भगवान को प्रिय है। मीरांबाई में ये समस्त गुण विद्यमान थे अत: भगवान स्वयं उन्हें अपने पास ले गये।

मीरांबाई के लौकिक जीवन से जुड़े इन प्रकरणों से यह स्पष्ट भान होता है कि वे एक नित्यमुक्त सिद्धात्मा थी तथा भगवान ने उनके इस स्वरूप के दर्शन जनमानस को कराने के लिए ही इस प्रकार की परिस्थितियों की रचना की थी। धन्य है मीरांबाई उनकी कीर्ति अमर रहेगी।

(संदर्भ ग्रन्थ- मीरां चरित-सौभाग्य कुंवरी जी राणावत)

तलवार से किसी को काटने के लिए उसकी धार को घिस-घिसकर तेज करना पड़ता है। हमें भी प्रगति मार्ग पर बढ़ने हेतु अपने आपको घिसना होगा, तपाना होगा, तभी हमारे आचरण की धार तेज होगी। हम अपने आपको जितना ज्यादा तपायेंगे और घिसेंगे, उतना ही आनन्द हमें कालान्तर में आएगा।

योग दर्शन

– रश्मि रामदेरिया

''तपः स्वाध्यायेश्वर प्रणिधानानि क्रिया योगः।। तपः, स्वध्याय, ईश्वर-प्राणिधानानि, क्रिया-योगः।।

''योगः कर्मसु कौशलम्'' (गीता)

योग दर्शन से ही मनुष्य योग्य बनता है। आत्मा को जो परमात्मा से जोड़ दे वही योग है।

'योग' आर्य जाति की प्राचीनतम विद्या है। योग ही सर्वोत्तम मोक्षोपाय है। जीव को ईश्वर से मिलाने में योग ही भक्ति और ज्ञान का प्रधान साधन है। ''योगश्चित्तवृत्ति-निरोध'' चित्तवृत्तियों का निरोध ही योग है। योग की अनेक शाखा-प्रशाखाएँ हैं। क्रिया योग, चर्चा योग, कर्म योग, हठ योग, मंत्र योग, ज्ञान योग, लक्ष्य योग, ब्रह्म योग, शिव योग, सिद्धि योग, ध्यान योग तथा प्रेमभक्ति योग द्वारा साध्य माना है। सांख्य-योग के समान तंत्र होने की पुष्टि। सांख्य तथा योग दोनों दर्शनों में बुद्धि और पुरुष में अनादि स्वस्वामि भावसम्बन्ध को स्थापित किया गया है। विषयप्रयोग और विवेकख्याति ये दो पुरुषार्थ बुद्धि के कहे जाते हैं। योग का अर्थ समाधि है। चित्त सत्त्वप्रधान प्रकृति-परिणाम है। चित्त प्राकृत होने से जड़ और प्रतिक्षण परिणामशाली है। चित्त की 5 भूमियाँ या अवस्थाएँ होती हैं-क्षिप्त, मूढ़, विक्षिप्त, एकाग्र और निरुद्ध।

''योग वह प्रकाश है जो एक बार जला दिया जाये तो कभी कम नहीं होता है। अतः जितना अच्छा हम अभ्यास करेंगे, लौ उतनी ही उज्जवल होगी।''

दर्शनशास्त्र में योगदर्शन का विशेष महत्त्व है। योग दर्शन और साधना उतनी ही पुरानी है जितनी पुरानी मानव सृष्टि। योग का इतिहास सृष्टि के आरम्भकाल से वैदिक ऋषियों से प्रारम्भ होता है। वेद और वेदांग साहित्य में योग के अनेकों संदर्भ मिलते हैं। वेदान्त अर्थात् वेदों के अन्तिम भाग ब्राह्मण, उपनिषद, आरण्यक तो साधना को लक्ष्य करके ही लिखे गए ग्रंथ हैं। हिरण्यगर्भ भगवान ब्रह्मा को योगशास्त्र का आदि प्रवक्ता कहा गया है। स्वयंभू मन्वंतर में महर्षि कपिल महायोगी थे। इस प्रकार सृष्टि के आदिकाल में हिरण्यगर्भ ब्रह्मा, शिव, ऋषभदेव, सनत्कुमार, नारद, कर्दम, कपिल तथा वेद ऋचाओं के दृष्टा अत्रि, वषिष्ठ, कश्यप आदि अनेकों योगसिद्ध साधकों आदि महर्षियों ने योगशास्त्र का विस्तार किया।

भगवान परशुराम ने योग आराधना कर अनेकों सिद्धियाँ प्राप्त की थी। श्रीमद्भगवद गीता में ज्ञानयोग, कर्मयोग, जपयोग, भक्तियोग आदि का विस्तार से वर्णन है। प्रभु श्रीकृष्ण को योगिराज कहा जाता है जो कि प्रवृत्ति और निवृत्ति दोनों विषयों के जगद्गुरु माने जाते हैं। 'ब्रह्मपुराण', 'शिवपुराण', 'अग्निपुराण', 'विष्णुपुराण' आदि पुराण एवं पंचरात्र आदि ग्रंथ व साहित्य में योग साधना की अनेकों पद्धतियों का वर्णन प्राप्त होता है। योगदर्शन का प्रमुख लक्ष्य है मनुष्य को वह परम लक्ष्य (मोक्ष) की प्राप्ति करा सके। योग दर्शन को 'सेश्वर सांख्य' (स+ईश्वर सांख्य) कहते हैं और सांख्य कहा जाता है। इसमें बताया गया है किस प्रकार मनुष्य अपने मन (चित्त) की वृत्तियों पर नियंत्रणा रखकर जीवन में सफल हो सकता है। योगदर्शन में आत्मनियंत्रण तथा ध्यान के अभ्यास द्वारा एकाग्रता प्राप्त करने का उपाय बताया गया है। अत्यन्त निर्मल बुद्धि में पड़े प्रतिबिम्ब से पुरुष को अपने असली केवल निरंजन रूप का ज्ञान हो जाता है और वह मुक्त हो जाता है। अस्मिता (मैं और मेरा) अर्थात् अहंकार, बुद्धि और आत्मा को एक मान लेना क्लेश है। सुख और उसके साधनों के प्रति आकर्षण, तृष्णा और लोभ

का नाम राग है। दु:ख या दु:खजनक वृत्तियों के प्रति क्रोध की जो अनुभूति होती है उसी का नाम द्वेष है। जिजीविषा के वशीभूत होकर मनुष्य न्याय-अन्याय कर्म कुकर्म, ऊँच-नीच का विचार न कर पाने के कारण नित्य नए क्लेशों में बँधता जाता है। यौगिक क्रियाओं द्वारा योगी इन क्लेशों का नाश करता है और उनका नाशकर परमार्थ की सिद्धि करता है। योग के आठ अंग हैं- 1. यम, 2. नियम, 3. आसन, 4. प्राणायाम, 5. प्रत्याहार, 6. धारणा, 7. ध्यान, 8. समाधि- अष्टाग योग भी कहा जाता है। प्रकृति, पुरुष-स्त्री के स्वरूप के साथ ईश्वर के अस्तित्व को मिलाकर मनुष्य जीवन की आध्यात्मिक, मानसिक और शारीरिक उन्नति के लिए दर्शन का एक बड़ा व्यावहारिक और मनोवैज्ञानिक रूप योगदर्शन में प्रस्तुत किया गया है। इसका प्रारम्भ पतञ्जलि मुनि के योगसूत्रों से होता है। नकारात्मक वृत्तियाँ ईर्ष्या, द्वेष, लोभ, मोह आदि उत्पन्न कर योग मार्ग में बाधक बनती हैं। चेतन आत्मा का शाश्वत सत्य है। मान, क्रोध, प्रमाद, रोग और आलस्य ज्ञान योग में प्रमुख बाधक हैं। सिद्धासन मन-मस्तिष्क को शान्त करता है, नाड़ियों पर संतुलित प्रभाव रखता है और चक्रों की आध्यात्मिक ऊर्जा को पुन: संचालित व अधिक सक्रिय कर देता है। अत: बैठने की यह मुद्रा प्राणायाम और ध्यान के लिए सर्वाधिक उपयुक्त है।

सबसे पहले भस्त्रिका प्राणायाम से शुरुआत करनी चाहिये। भस्त्रिका के बाद कपालभाति, ब्रह्म प्राणायाम, अनुलोम-विलोम प्राणायाम, भ्रामरी प्राणायाम तथा उद्गीत प्राणायाम, यही सही क्रम है। बैठकर : पद्मासन, वज्रासन, सिद्धासन, मत्स्यासन, वक्रासन, गोमुखासन, उष्ट्रासन, ब्रह्ममुद्रा आदि।

पीठ के बल पर :- अर्धहलासन, हलासन, सर्वांगासन पवनमुक्तासन, नौकासन, शवासन आदि।

पेट के बल लेटकर :- मकरासन, धनुरासन, भुजंगासन, शलभासन, विपरीत नौकासन आदि।

चित्त की एकाग्रता को ध्यान कहते हैं।

''सेहत का राज छिपा है योग में।
जीवन का आनन्द रहता निरोध में।।
सुबह की यह मेहनत देगी जीवन को आनन्द,
है अपनी मुट्ठी में सेहत का राज बन्द।।
ना आयेगा बुखार, ना होगा जी जुकाम
सभी बीमारियाँ दूर से करेगी राम-राम।''

योग के मुख्य चार प्रकार होते हैं। राज योग, कर्म योग, भक्ति योग और ज्ञान योग। योग अगर सही तरीके से किया जाए तो इसका असर कुछ ही दिनों में दिखने लगता है। 10 अंगों की मदद से किए जाने वाले सूर्य नमस्कार में कुल 12 तरह के आसन होते हैं। यदि वास्तव में योग में रुचि रखते हैं तो आपके जीवन का प्रत्येक क्षण योग बन सकता है। जब साधक ध्येय वस्तु के ध्यान में पूरी तरह से डूब जाता है उसे समाधि कहते हैं। समाधि के बाद प्रज्ञा का उदय होता है और यही योग का अन्तिम लक्ष्य है।

''योग केवल वर्क-आउट नहीं है, योग के ध्यान से हमारी अन्तर शक्ति जागती है, ताकि हम जान सकें हम क्या हैं और हमें अपने जीवन से क्या चाहिये।''

जिसके शरीर पर रहने वाला सिर उसका खुद का नहीं है, वह अमर है।

- पूज्य तनसिंह जी

पठन, गुणन व अनुभूतिकरण

– अड़िसालसिंह लोहरवाड़ा

कबीर भक्त थे और उनका लड़का भी भक्त था। उलाहना देते कबीर प्राय: कहते थे–'बिगड़ा वंश कबीर का उपजे पूत कमाल'। इसी पुत्र कमाल को कबीर कहा करते थे कि, बड़ी स्त्री माता के समान है, छोटी बहिन के समान और भी छोटी हो तो पुत्री के समान है। एक दिन कबीर ने कहा–बेटा, अब तुम्हारी उम्र 18 साल की हो गई है, तुम्हारा विवाह करेंगे तो कमाल ने कहा–आप मेरा विवाह माता, बहिन या पुत्री किसके साथ करेंगे? जो वंश बिगाड़ कहा जाता था उसमें ऐसा परिवर्तन आया कि कहा गया–'आधा भक्त कबीर था, पूरा भक्त कमाल'।

माता–पिता, गुरु, अग्रज, सहृदयी के शब्दों–वचनों को जिसने अंगीकार किया उसे जीवन में उद्धारक सफलताएँ मिली। बड़े बुजुर्गों के आशीर्वचन का प्रत्यक्ष प्रभाव पड़ता ही है किन्तु उनके तिरस्कार, उलाहने भी कम चमत्कारी नहीं होते। आवश्यकता है उन्हें समझने की और तत्सम सम्यक आचरण की। आशीर्वचनों को शिरोधार्य कर आचरण में लाने की प्रक्रिया अपरिमित ऊर्जा का संचार करती है जबकि सही रूप में ली गई अवहेलना सही दिशा में अथक परिश्रम करने की सीख देती है। एक उलाहना अगर अन्त:करण भेद जाए तो कालीदास बनते देर नहीं लगती। अनेकानेक उदाहरण हमारे समक्ष हैं। जीवन में किसी कार्य में सफलता–असफलता शारीरिक बल से कहीं अधिक बौद्धिक अन्वेषणा पर आधारित है–इसलिए ही कहते हैं–मन के हारे हार है और मन के जीते जीत।

पुस्तकों का ज्ञान एवं पाण्डित्य परमात्मा से मिलान करा दे, ऐसा नहीं है। ज्ञान के लिए बुद्धि की अप्रतिष्ठा बतायी गयी है। शुरुआत में बुद्धि का उपयोग अवश्य है परन्तु इसके आगे तो प्रधानता अनुभूति की है। अनुभूति ही सार वस्तु है।

राम कृष्ण परमहंस कहते थे स्वयं को मारने के लिए तो एक चाकू बहुत है, दूसरे को मारने के लिए कई प्रकार के शस्त्र चाहिए। आत्म–अनुभूति के लिए तो एक–दो बातें ही काफी हैं। अनुभूति में यदि कुछ आ गया तो चिरस्थायी रहेगा। उसके लिए स्मृति रखने की आवश्यकता नहीं होती।

अत: सद्पुरुषों के शब्द को ब्रह्म मानते हुए, शब्दों के समूह (विचार) की अनुभूति ही महत्त्वपूर्ण है। शब्द और विचार ही हमारे जीवन के नियामक हैं। अनुभूत लगन हो तो सफलता निश्चित है। एक पण्डित जी की स्मरण शक्ति कमजोर थी। कुछ भी स्मरण नहीं रहता। स्वयं को कोसा करते। एक समय वे एक पनघट पर पहुँचे। देखा कुएं की मुण्डेर पर पत्थर शिला पर घट रखने से गोल गोल निशान बने हुए थे। कुएं पर चढकर देखा तो रस्सी से पानी खींचने से पत्थर पर भी गड्ढे पड़ गये थे। पण्डित जी को अनुभव हुआ कि दोनों निशान बार–बार घट रखने एवं रस्सी की रगड़ से बने हैं। पण्डित को तुरन्त समझ आया कि अभ्यास–दर–अभ्यास मेरी कमजोर स्मरण शक्ति की बीमारी को ठीक कर सकता है। यही पंडित जी बोपदेव जी के नाम से ख्याति प्राप्त बने। इन्होंने ही पाणिनीय व्याकरण की कलिष्ठता अनुभव की और मुग्धबोध नाम का संस्कृत का सुगम व्याकरण बनाया। सारांश

जाने बिनु न होइ परतीती।
बिनु परतीति होई नहीं प्रीती।।
प्रीति बिना नहीं भगति दिढ़ाई।
जिमि खगपति जल कै चिकनाई।।

पारिवारिक रिश्तों की ढीली होती डोर

– डॉ. मातुसिंह मानपुरा

भारतीय समाज और संस्कृति परस्पर सहयोग पर आधारित रहे हैं। प्राणी जगत के सहयोग से जीवन को सुखमय बनाने का अद्वितीय उदाहरण इस शाश्वत संस्कृति का स्तम्भ है। जहाँ पशुओं एवं पौधों को माता के रूप में प्रतिष्ठित करने का आचार-विचार जीवन का आधार रहा हो वहाँ पारिवारिक रिश्तों में अलगाव की कल्पना करना बौद्धिक क्षमता की परख से बाहर प्रतीत होता है। जहाँ 'घर जाये (जन्में) से घर आये (मेहमान)' को अधिक स्नेह व सम्मान देना सुख एवं सम्पन्नता का कारण माना गया हो वहाँ परिवार में विघटन की कहानी सुनने को मिले तो निश्चित रूप से युवाओं के साथ हम प्रौढ भी कहीं न कहीं जिम्मेदार अवश्य हैं। ऐसा लगता है कि अहंकार के साथ सुख का संगम युवा पीढी को सब बंधन तोड़ने के लिये प्रोत्साहित कर रहा है, जिसे रोकने के लिये समाजशास्त्रियों के समस्त प्रयोग असफल होते दिखाई दे रहे हैं लेकिन प्रयास किसी भी काल एवं परिस्थितियों में असफल नहीं हुआ करते हैं।

संयुक्त परिवार मानव जीवन की समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति का स्रोत रहा है। क्षेत्र के अनुसार 50-60 वर्ष पूर्व तक 15-20 घरों के बाहर एक ही प्रवेश द्वार होना आपसी प्रेम एवं सुरक्षा की दृष्टि से आवश्यक माना जाता था। गाँवों में यह प्रवेश द्वार कंटिली झाड़ियों या मिट्टीयुक्त कच्ची ईंट-पत्थरों से तैयार किया हुआ होता था तथा उसके पास सामर्थ्य के अनुसार बैठने का स्थान आवश्यक था, जहाँ बड़े-बुजुर्ग बैठकर घर-परिवार एवं गाँव-गुवाड की बातें करते तथा सर्दियों के मौसम में लकड़ी जलाकर तापते रहते थे, बाहर का व्यक्ति इस द्वार से आगे बिना आपसी मनोसहमति के प्रवेश नहीं करता था। शहरों में बैठने के लिये घर के आगे चोकियाँ आपसी सम्पर्क का माध्यम थी। गाँव में बाहर से आये मेहमानों एवं परिवार के पुरुष सदस्यों की बाहर की बैठकें सामुहिक होती थी जहाँ पर स्वजनों के अतिरिक्त समस्त बस्ती के सम्बन्ध में चिन्तन-मनन करने का संवाद होता जिसमें-पारिवारिक भाव भी जागृत होता था। संयुक्त परिवारों के समूह में से एक घर का मेहमान सभी का मेहमान माना जाता था। भोजन की थाली में रखी कटोरियाँ पारिवारिक सामंजस्यता एवं सम्पन्नता का परिचय देती थी। अभावों की पूर्ति हेतु आवश्यकताएँ भी स्नेहपूर्ण वातावरण का निर्माण करने में सहायक थी। यह किसी काल्पनिक कहानी का अंश न होकर आँखों देखा पारिवारिक दृश्य रहा है।

लगभग तीन-चार दशक से प्रोढ व्यक्तियों का सुबह-शाम एक साथ नहीं बैठने के कारण नई पीढी को अप्रत्यक्ष रूप से यह संदेश मिल गया कि एक साथ रहे बिना भी सुख-सुविधाओं के साथ रहा जा सकता है। यहीं से संयुक्त परिवार के विघटन की कहानी प्रारम्भ हो गयी, समझ नहीं आता दोष किये दिया जाये? समय परिवर्तनशील है, दोष कोई भी स्वीकार करने को तैयार नहीं है, सबके अपने तर्क हैं। सामुहिक बैठकों को छोड़कर अपने-अपने सुविधायुक्त घरोंदे तैयार कर लिये। टूटने की श्रृंखला आगे बढी तो संयुक्त परिवार टूट कर घर हमारे अपने हो गये, मेहमान हमारे अपने हो गये, दादा-दादी हमारे अपने हो गये और समय आगे बढा तो मम्मी-पापा हमारे हो गये और फिर देर नहीं लगी, मम्मी के खानदान ने सहयोग किया तो हम दो हमारे दो हो गये, तथाकथित शिक्षा का प्रभाव हुआ कि हम दो हमारे एक हो गया। संयुक्त परिवार के ताने-बाने ढीले होते-होते टूट गये। दादा-दादी और चाचा-ताऊ से अलग माता-पिता के साये में रहने वाले अपरिपक्व दिमाग के बच्चों ने इसे समाज-परिवार का रिवाज मान लिया तथा शादी होने के बाद

बच्चों की पढाई या सर्विस के नाम से पंख फड़फड़ा कर त्याग और स्नेह से सिंचित घोंसले को त्यागने का निर्णय कर लिया।

समय परिवर्तनशील है, यह सकारात्मक एवं नकारात्मक दोनों ही दिशाओं में चलता है। सामाजिक रिश्ते भावना प्रधान होते हैं। सर्वविदित है कि रिश्ते सकारात्मक हवाओं के सहारे पल्लवित पुष्पित किये जा सकते हैं लेकिन अहंकार मिश्रित संसाधनों की आँधी इतनी तेज है कि भावनाओं की कोंपलें कुंठित होती नजर आ रही हैं। नवयुवकों द्वारा स्वाभिमान के रूप में आरूढ अहंकार एवं आर्थिक मोह को त्याग समाज के प्रत्येक कार्यक्रम में बुजुर्गों के नेतृत्व को प्राथमिकता देकर ढीली होती बंधन की डोर को सम्भाला जा सकता, लेकिन मार्गदर्शक पेरेन्टस मूकदर्शक होता नजर आ रहा है। स्मरण रहे! परिवार-समाज के बुजुर्ग संसाधनों के नहीं सम्मान के भूखे होते हैं और सभी को बराबर स्नेह देने का प्रयास करते हैं, उन बुजुर्गों के लिये हमारी वाणी से किया सम्बोधन और आँखों से झलकता सम्मान रिश्तों को मजबूत करने का मार्ग प्रस्तुत करता है और यही मार्ग दोनों पीढियों के मध्य बढते फासले को कम करता है।

सांसारिक-प्रेम का आकर्षण और आर्थिक विकास की तथाकथित दौड़ मृगतृष्णा है जो भविष्य में पश्चाताप का कारण बनती है। वास्तविक स्नेह एवं सम्मान के बिना कृत्रिम पुष्पों से सुगंध लेने का प्रयास अहसास मात्र है जो क्षणभंगुर है। सम्मान और स्नेह का आदान-प्रदान ही संयुक्त परिवार को टूटने से रोक सकता है। स्वयं को सर्वगुण सम्पन्न मानने वाली युवा पीढी अनुभव के मार्गदर्शन के बिना अधूरी है और यही अधूरापन संयुक्त परिवार को जोड़ने की नहीं तोड़ने की धूरी बनता है। जोश और होश का सामंजस्य नई पीढी को संस्कार प्रदान करता है जो जीवनभर सुख का कारण बनते हैं। बिना आपसी सहयोग के सुखमय जीवन की कल्पना करना बुजुर्गों के लिये कष्टदायक है लेकिन नई पीढी अहंकार के सहारे सुखमय जीवन नहीं देख सकती क्योंकि आज के बच्चे कल के युवा और आज के युवा कल के बुजुर्ग होंगे। सम्भल कर सामंजस्यपूर्ण जीवन ही युवा एवं बुजुर्ग तथा समाज व संस्कृति के लिये हितकर है जिसके लिए संसार की मनुष्य योनि में आगमन हुआ है। सम्बन्धों में नाममात्र का अलगाव भी अशान्ति एवं पराभव का कारण बन सकता है। हमारा लोक साहित्य भी इस ओर संकेत करता है-

घण-घण साबळ घाय, नह फूटै पहाड़ निवड़।
जड़ कोमळ कट जाय, राय पड़ै जद राजिया।।

मनुष्य की दुर्बलता का दूसरा नाम परिस्थिति है। जब मनुष्य विवश होकर कुछ नहीं कर सकता, तो वह सरलता से कह देता है, परिस्थिति अनुकूल नहीं है, भयानक है। मनुष्य ही परिस्थितियों का निर्माण करता है और निर्माण कर चुकने पर जब असफल हो जाता है तो भाग्य को दोष देता है। अपने हाथ से ही अपनी शक्तियों की हत्या करता है और कहता है कि मैं अकेला हूँ।

- डॉ. रामकुमार वर्मा

खेड़गढ़ के गोहिल राजवंश संबंधित ऐतिहासिक भ्रांतियों का निराकरण

– महेन्द्रसिंह छायण (जैसलमेर)

वर्तमान में ऐतिहासिक तथ्यों व चरित्र-नायकों को लेकर गलत अवधारणाओं को जन्म देना व विकृतीकरण करना आम बात हो गई है। राजपूतों के इतिहास व नायकों के चरित्र-चित्रण को लेकर जितने मनगढंत तथ्यों व निर्मूल धारणाओं को दुष्प्रचारित किया गया है, उससे उनकी वास्तविक प्रभा धुंधलाती जा रही है। इसी संदर्भ में खेड़गढ़ के गोहिल राजवंश संबंधित ऐतिहासिक भ्रामक धारणाओं का निराकरण इस आलेख में किया जाना अपेक्षित है।

मारवाड़ में राठौड़ सत्ता की स्थापना से पूर्व मेवाड़ से निकले गुहिल राजवंश की छः शाखाएं शासनरत थी जिनमें खेडगढ़ के गोहिल, खींवसर के मांगलिया, देचू-शेखाला के आशायच, पीपाड़ के पिपाड़ा, सोजत के हुल व कुचेरा के गहलोत मुख्य हैं। इनमें सबसे प्रमुख खेड़गढ़ के गोहिल है।

मारवाड़ में बालोतरा के पास लूनी नदी के तट पर खेड़गढ़ प्रसिद्ध राज्य था। पूर्व में क्षीरपुर/खेरपट्टन नाम से प्रसिद्ध यह नगर व्यापारिक व सामरिक दृष्टि से अत्यंत महत्त्वपूर्ण था। मेवाड़ के रावल शालिवाहन (973-977 ई.) के वंशजों ने इस क्षेत्र में बीस पीढ़ी तक शासन किया था। दसवीं से तेरहवीं शताब्दी तक खेड़गढ़ के गोहिलों ने तीन सौ-साढ़े तीन सौ वर्ष तक अभेद्य प्राचीर बनकर भारत की अस्मिता की रक्षा की, जिसे इतिहास में कभी पढ़ाया नहीं गया। गोहिलों ने पश्चिमी द्वार पर प्रहरी बनकर अरबों, तुर्की, बलोचों व सिराइयों से अनवरत संघर्ष करते हुए अप्रतिम बलिदान दिये। खेड़गढ़ के अंतिम शासक महेशदास गोहिल के समय तक खेड़ राज्य में 560 गाँव थे। उनसे यह राज्य राव सीहा के पुत्र आस्थान ने कूटनीतिपूर्ण तरीके से वैवाहिक संबंध की आड में हस्तगत किया था। भौगोलिक दृष्टि से देखा जाये तो गोहिल वंश के अंतर्गत खेड़गढ़ राज्य दक्षिण में गुजरात से लेकर उत्तर में पोकरण-फलोदी तक विस्तृत था। वहीं मंडौर व जाबालिपुर (जालौर) से इसकी सीमाएं लगती थी। कतिपय इतिहासकारों ने विशेषकर गुजरात के गोहिलों (भावनगर, पालीताणा, राजपीपला, लाठी, वला राज्य) के संदर्भ में, जो खेड़गढ़ के गोहिलों की ही संतति हैं; को चंद्रवंशी सिद्ध करने के लिए भ्रामक धारणाओं को जन्म दिया है। इस आलेख में इसका संदर्भों सहित निराकरण किया गया है तत्पश्चात् गोहिलों के प्राचीन इतिवृत्त पर बात करने की चेष्टा की गई है। गोहिलों को चंद्रवंशी मानने वाले यह तर्क देते हैं कि-

1. कर्नल टॉड ने लिखा है कि 'घोघा के रामसिंह का विवाह चित्तौड़ के राणा की लड़की सृजनकुंवरी से हुआ। रामसिंह चित्तौड़ की रक्षा करते हुए काम आया व उसकी स्त्री सती हुई। (टॉडकृत ट्रावेल्स इन वेस्टर्न इंडिया, अनुवाद-बोहरा, पृष्ठ-274 व 280)

2. वीर विनोद में श्यामलाल ने लिखा है कि रावल रामशाह की शादी चित्तौड़ के राणा सांगा की पुत्री से हुई। गुजराती महमूद व राणा सांगा के बीच हुई लड़ाई में रामशाह वि. 1576 में मारा गया। (वीर विनोद, वॉलम-2, पृष्ठ- 2 ओझा जी ने अंकित किया)

3. वि.सं. 1913, सन् 1856 ई. में लिखित एलेक्जेण्डर किनलॉक फॉर्ब्स कृत रासमाला में लिखा है- 'विक्रमादित्य को जीतने वाले पैठन (प्रतिष्ठान) नगर (दक्षिण) के चंद्रवंशी शालिवाहन के वंशज गोहिल हैं। उनका प्रथम निवास स्थान

मारवाड़ में लूणी नदी के किनारे जूना खेरगढ़ (खेड़) था। उन्होंने यह प्रदेश खेरवा नामक भील को मारकर लिया और 20 पुश्तों तक वहां पर राज्य किया। फिर राठौड़ों ने उनको वहां से निकाल दिया।

4. वि.सं. 1950 में बला (गुजरात) के गोहिलों के ठिकाने के दीवान लीलाधर भाई के पास गुहिलों के इतिहास की हस्तलिखित पुस्तक में एक छप्पय मिला। जो इस प्रकार है–

चंद्रवंश सरदार, गौत्र गौतम बखाणूं।
शाखा माधवी सार, जेकेप्रवरत्रणजाणूं।
अग्निदेव उदार, देव चामुण्डा देवी।
पाण्डवकुल परमाण, आय गोहिल मूल ऐसी।
विक्रम वध करनार, नृप शालिवाहन चकवै थयो।
ते पंछी ते औलाद मां, सोरठ में सेजक भयो।।

5. मेवाड़ के गोहिल वैजपायन गौत्र के हैं तथा गुजरात के गोहिलों का गौत्र गौतम है। अतः ये सूर्यवंशी नहीं हैं।

उक्त तर्कों का कोई ठोस व प्रामाणिक आधार नहीं है। यह दुर्भाग्य है कि गुजरात के गोहिलों व उनके इतिहासकारों के पास सेजक के बाद की ही जानकारी है। उससे पूर्व की जानकारी नाममात्र की है। गोहिलों के गुजरात जाने के बाद उनका वास्तविक राव–बारोठों से संपर्क–विच्छेद हो गया। इसलिए उनका प्राचीन इतिहास, जो रिकॉर्ड के आधार पर सही चला आ रहा था; गुजरात जाने के बाद विशृंखल हो गया। वस्तुतः गोहिलों को चंद्रवंशी सिद्ध करने की अवधारणा गढ़ने वालों को खेड़गढ़ की कोई विशेष जानकारी नहीं होने के कारण ऐसा हुआ है। उक्त भ्रामक तर्कों का ऐतिहासिक निराकरण इस प्रकार है–

1. कर्नल टॉड ने गोगा के रामसिंह का विवाह चितौड़ के राणा सांगा की पुत्री सृजनकुंवरी से बताया लेकिन इसका कोई संदर्भ या ठोस प्रमाण नहीं दिया। यह बात केवल किंवदंतियों के आधार पर गढ़ी गई है, जिसका कोई आधार नहीं है। परवर्ती इतिहासकारों ने कर्नल टॉड की पूरी बात यहां उल्लेखित नहीं की है। टॉड इसी बात को आगे बढ़ाते हुए कहता है कि –भावनगर के इतिहास–लेखक मुझे अब तक मिले हुए लेखकों में सबसे अधिक अनपढ थे। (टॉड कृत पश्चिमी भारत की यात्रा, पृष्ठ–280, अनुवाद–गोपालनारायण बहुरा) इससे स्पष्ट होता है कि बिना प्रमाण के टॉड ने उन अनपढ़ इतिहासकारों की किंवदंतियों को इतिहास में जगह दे दी है। अब इधर इतिहासकार श्री कालीपहाड़ी ने महामहोपाध्याय कविराजा श्यामलदास की वीर–विनोद का उक्त उद्धरण ओझा के अनुसार दे रहे हैं। स्वयं इसकी पड़ताल शायद नहीं की। वे ओझा की नकल का हवाला देते हैं जबकि ओझा का स्पष्ट मत है कि गुजरात के गोहिल मेवाड़ के रावल शालिवाहन के वंशज हैं। (उदयपुर राज्य का इतिहास ओझा, पृष्ठ–1046) अब यहाँ यह स्पष्ट करना समीचीन रहेगा कि गोगा के रामदास की शादी मेवाड़ के राणा सांगा की किसी पुत्री से नहीं हुई थी। राणा सांगा की चार पुत्रियां थी कंवराबाई, गंगाबाई, राजबाई, पद्मबाई। इनमें कहीं पर भी सृजनकुंवरी का नाम उल्लेखित नहीं है। (बड़वा देवीदान कृत ख्यात– मेवाड़ के राजाओं की राणियों, कुंवरों व कुंवरानियों का हाल, पृष्ठ–9)

यहाँ यह उल्लेखित करना आवश्यक है कि खेड़गढ़ में गोहिलों का शासन दसवीं से तेरहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक रहा। इस समय की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि देखें तो उस समय मंडौर में प्रतिहार, लोद्रवा में परमार व तत्पश्चात् भाटी, जालौर में चौहान, मेवाड़ में गुहिल, धार व मालवा में परमार व गुजरात में सोलंकियों का शासन था। खेड़गढ़ के गोहिलों के मेवाड़ के गोहिलों से कभी कोई वैवाहिक संबंध नहीं हुआ। न ही ऐसा कोई प्रमाण है। जबकि खेड़गढ़ के गोहिलों के परमारों, भाटियों, प्रतिहारों व सोलंकियों व तत्पश्चात् राठौड़ों के साथ वैवाहिक संबंध थे। बिना किसी प्रमाण के

आधार पर गुजरात व मेवाड़ के गोहिलों को पारस्परिक संबंधी ठहराकर एक ही वंश को जबरन चंद्रवंशी व सूर्यवंशी सिद्ध करने की कुचेष्टा करने वालों को तत्कालीन परिप्रेक्ष्य को ठीक से समझना-पढ़ना होगा।

2. वस्तुतः दक्षिण के प्रतिष्ठान (पैठन) नगरी को राजधानी बनाने वाला शालिवाहन स्वयं भी चंद्रवंशी नहीं था, वह तो कुंभकार (कुम्हार) था। (मेरुतुंग कृत प्रबंध चिंतामणि, पृष्ठ-24-30) इससे खेड़ के गोहिलों का कोई संबंध नहीं है। खेड़ के गोहिल मेवाड़ के रावल शालिवाहन (973-977 ई.) के वंशज हैं।

3. उक्त छप्पय वि.सं. 1950 में प्रकाश में आया है। जबकि खेडगढ़ गोहिलों से इससे छः सौ-सात सौ वर्ष पूर्व छूट चुका था। इस अवधारणा पर कर्नल टॉड की सुनी-सुनाई बातों का प्रभाव परिलक्षित होता है। गुजरात के गोहिलों के पास केवल खेड़गढ़ छूटने के बाद का यानी कि सेजक के बाद का इतिहास है, उससे पूर्व यानी कि खेड़गढ़ की बीस पीढ़ियों का इतिहास नहीं है। साहित्य और इतिहास में अंतर होता है। कविता भावों व कल्पनाओं का अंकन है जबकि इतिहास प्रमाणों व संदर्भों के साथ चलता है। अतः यह रचना डिंगल काव्य की दृष्टि से तो ठीक हो सकती है किंतु ऐतिहासिक दृष्टि से इसका कोई प्रामाणिक अर्थ नहीं है। ठीक वैसे ही जैसे जायसी कृत 'पद्मावत' साहित्य की अप्रतिम कृति हो सकती है, किंतु उसकी ऐतिहासिकता संदिग्ध है। इधर मारवाड़ के गोहिलों की बहियों से स्पष्ट है कि खेड़गढ़ के गोहिल सूर्यवंशी हैं। जिसकी पुष्टि राजस्थान के विभिन्न ऐतिहासिक स्रोत करते हैं। यहाँ तक कि महाराणा मेवाड़ हिस्टोरिकल चेरिटेबल ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित मेवाड़ नरेशों की वंशावली भी रावल शालिवाहन के पुत्रों के रूप में खेड़ राज्य के गोहिलों को उद्‌धृत करती है।

मेवाड़ के गुहिलों के इष्टदेव एकलिंग है जबकि गुजरात के गोहिल मुरलीधर को अपना इष्टदेव मानते हैं। इस तथ्य के कारण भी उनके वंश की अनिश्चितता बनी रही है, जिसे कतिपय इतिहासकारों ने जाने-समझे बिना चंद्रवंश से जोड़ने की भूल की है। गुजराती मान्यतानुसार खेड़ के अंतिम शासक महेशदास गोहिल के पौत्र सेजकजी खेड़ से सीधे गुजरात गये थे और मुरलीधर की मूर्ति अपने साथ ले गये थे। खेड़ के विग्रह में गोहिल काफी संख्या में मारे गये थे। खेड़गढ़ के अंतिम शासक महेशदास गोहिल के वीरगति प्राप्त करने के बाद ही खेड़गढ़ गोहिलों से छूट चुका था। वे उस समय नाबालिग थे। तत्पश्चात् उनके पौत्र सेजक जी तक गोहिलों का खेड़गढ़ में रहना कैसे संभव था? सेजकजी का खेड़ से सीधा गुजरात जाने का कोई प्रमाण नहीं है। मुहणोत नैणसी अपनी ख्यात में लिखता है कि ''गोहिला कना खेड़ राठौड़ा ली तरै गोहिल खेड़ छोड़ नै कोटड़ा रै देस बरिहाड़े गया हता। पछै कितराहेक दिन सीतोड़ाई जैसलमेर थी कोस 12 छै तठै जाय रह्या। पछै उठेही राठौड़ां आगै रह न सकै तरै जैसलमेर रो धणी गोहिलां रै परणियौ हतौ। सु ऐ रावळ कनै गया। तरै रावळ इणानूं केई दिन जैसळमेर रा गढ़ ऊपर राखिया। तिको दिखण दिस गढ़ में ओ अजेस गोहिल टोळो कहावै छै। तठा पछै कितरै हेक दिन ऐ सोरठ नूं गया।'' (नैणसी की ख्यात, पृष्ठ 333-334) इससे स्पष्ट है कि खेड़ छूटने के बाद गोहिल सीधे गुजरात नहीं जाकर कोटड़ा, सीतोड़ाई होते हुए जैसलमेर पहुँचे थे। जैसलमेर में रहने के कारण सेजकजी गोहिल पर कृष्ण का प्रभाव आया। जैसलमेर से राजकुमार जैतसी के निर्वासन-काल के दौरान ये उनके साथ गुजरात गये थे। जिसकी पुष्टि कल्याणदासोत गोहिलों की बही भी करती है। खेड़ के किसी राजा के इष्टदेव मुरलीधर नहीं थे। वस्तुतः मुरलीधर केवल सेजक जी के इष्टदेव थे, यह प्रभाव उन पर जैसलमेर में रहने के कारण आया था। चूंकि सेजकजी गुजरात के गोहिलों के पूर्वपुरुष हैं, इसलिए मुरलीधर को

समग्र गोहिल वंश का इष्टदेव मानकर उनसे जोड़ देने की भूल हुई है। यहां यह समझना भी उपयुक्त रहेगा कि जो गोहिलों को अर्जुनायनों से जोड़ते हैं, उन्होंने भी कृष्ण के आधार पर गोहिलों को चंद्रवंशी सिद्ध करने का प्रयास किया है। किंतु उन्हें समझना चाहिए था कि अर्जुनायन पुरु (कुरु) वंशी हैं, उनका कृष्ण से इष्टदेव का संबंध नहीं रहा। कृष्ण पुरु वंश के न होकर यदुवंशियों के इष्टदेव हैं और गोहिलों के यदुवंशी होने का कोई प्रमाण नहीं है।

अब प्रश्न उठता है कि गोहिलों को चंद्रवंशी मानने की अवधारणा का जन्म कहां से और क्यों हुआ? तो स्पष्ट होता है कि कर्नल टॉड के उस वाकये के साथ इस भ्रामक धारणा का जन्म होता है, जिसका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है, जिसे भी उसी तरह प्रकट कर दिया है जैसे इतिहासकार श्री कालीपहाड़ी ने 'क्षत्रिय राजवंश' में भी उसी तरह प्रकट कर दिया है। यदि श्री कालीपहाड़ी के आलेख को छोड़ दें तो कहीं पर भी गोहिलों को चंद्रवंशी सिद्ध करने की पहल सामने नहीं आती। अब श्री कालीपहाड़ी ने जो लिखा, उसका निराकरण इस प्रकार है। श्री कालीपहाड़ी कहते हैं कि आठवीं से दसवीं शताब्दी तक चाटसू (जयपुर), नगर (टोंक) व नासून (अजमेर) के शिलालेखों से मालूम पड़ता है कि अजमेर के आसपास मेवाड़ के गुहिलों से भिन्न दूसरे गुहिल शासन करते थे, पुष्कर के 1243 वि.सं. के शिलालेख के अनुसार जिनका गौत्र गौतम था। इन्हीं गुहिलों के भाईबंध खेड़गढ़ (बाड़मेर) के गुहिल थे, जिनके बहुत से वंशज गुजरात में हैं। यहाँ यह बात समझनी होगी कि उक्त गुहिलों का खेड़गढ़ के गुहिलों से कोई संबंध नहीं है, न ही ऐसा कोई पुष्ट प्रमाण है जिनके आधार पर खेड़ के गोहिल इनके वंशज /भाईबंध सिद्ध हों। रही बात गौत्र की तो इतिहासकारों को गौत्र की परम्परा समझनी चाहिए। राजपूतों के गौत्र ब्राह्मणों के अनुसार बदलते रहे है। ब्राह्मणों के गौत्र यजमान के गौत्र माने जाते हैं। मेवाड़ के ब्राह्मण पहले चौबीसा ब्राह्मण थे जिनका गौत्र वैजपायन था। लेकिन रावल शालिवाहन के वंशजों ने जब खेड़गढ़ पर अधिकार किया तब मनणा राजपुरोहितों को अपना पुरोहित बनाया। अब प्रश्न उठता है कि गौतम गौत्र होने का अर्थ चंद्रवंशी कबसे होने लगा? राठौड़ और कछवाहों का मूल गौत्र गौतम है जबकि दोनों सूर्यवंशी हैं। वस्तुतः खेड़गढ़ के गोहिलों के ब्राह्मण मनणा राजपुरोहित हैं, उनका गौत्र गौतम है, जो उनके यजमानों पर भी लागू हुआ है। अब स्वयं काली पहाड़ी के ही मत को उद्धृत करते हैं– वसुदेव के पुत्र बलराम गुरु गौत्र की दृष्टि से गार्ग्य गौत्र के थे और कृष्ण गौतम गौत्र के। भगवान बुद्ध (सूर्यवंशी) जिनके पूर्वजों का प्रथम गौत्र कोत्स था, बाद में गुरु–परम्परा में गौतम हो गया। इसी कारण बुद्ध गौतमबुद्ध कहलाते थे। (क्षत्रिय दर्शन विशेषांक–पृष्ठ 56) अब यहाँ यह बात स्पष्ट होती है कि जब सूर्यवंशी बुद्ध का गौत्र गौतम हो सकता है तो गोहिलों का क्यों नहीं? वस्तुतः मेवाड़ के गोहिल भी गौतमबुद्ध के ही वंशज हैं। स्वयं श्री कालीपहाड़ी भी कहते हैं कि राजपूतों के गौत्र उनके गुरु व पुरोहितों के गौत्र होते हैं। अतः भिन्न गौत्र होने से वंश भिन्न नहीं होता। (क्षत्रिय दर्शन विशेषांक–पृष्ठ 221)

अब यहाँ यह प्रश्न उठता है कि जिस 1243 वि.सं. के पुष्कर शिलालेख का उल्लेख किया है, उससे खेड़गढ़ के गोहिलों का कोई संबंध नहीं है। इस समय तक तो बीस पीढ़ी तक शासन करने के बाद खेड़गढ़ के गोहिलों की शक्ति अवसान पर थी, तत्पश्चात खेड़ गोहिलों से छूट भी गया था। कहने का तात्पर्य यह है कि अजमेर, चाटसू व नासूण के गोहिलों से खेड़गढ़ की शाखा नहीं निकली है। न इनकी वंश–परम्परा में उनका कहीं उल्लेख है। यहाँ यह बात समझनी भी जरूरी है कि जब राठौड़ और कछवाहों का मूल गौत्र गौतम होने के बाद वे सूर्यवंशी हैं तो किसी अन्य राजपूत

वंश के गौतम गौत्रीय होने से वे चंद्रवंशी कैसे हो सकते हैं? ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है कि खेड़गढ़ के गोहिलों के ब्राह्मण मनणा राजपुरोहितों का गौत्र गौतम अवश्य था। श्री कालीपहाड़ी खेड़ के गोहिलों का संबंध अर्जुनायनों से जोड़ते हुए कहते हैं कि 'आठवीं सदी में अलवर क्षेत्र में शालिवाहन नामक क्षत्रिय शासन करता था उसने शालिवाहनपुर नामक नगर बसाया था जिसको आजकल बहरोड़ कहते हैं। अलवर के समीपवर्ती सीकर (राज.) जिले में पाटन नामक प्राचीन नगर था जिसके अवशेष आज भी देखे जा सकते हैं। यह पाटन वर्तमान पाटन के पास ही है जो बेवा पाटन कहलाती थी। मालूम होता है गुजरात के गुहिलों का पूर्वज शालिवाहन इसी पाटन का शासक रहा होगा और शालिवाहन आगरा-भरतपुर पर शासन करने वाले गुहिल का वंशज होगा जिनके वंशज पाटन से आगे बढ़कर खेड़ पहुँचे होंगे और यह गुहिल अर्जुनायनों का वंशज होना चाहिए। अर्जुनायन पांडव अर्जुन के वंशधर थे। अतः ये चंद्रवंशी थे। उक्त कथन से स्पष्ट है कि यह अनुमान मात्र है। खेड़गढ़ के गोहिलों से अर्जुनायनों से जुड़ने का एक भी पुष्ट प्रमाण नहीं है। इतिहास अनुमान के आधार पर नहीं चलता। पुष्ट प्रमाणों के आधार पर चलता है। अब पता करते हैं कि अलवर में जो शालीवाहन था, वो कौन था? तंवर राजवंश की वंशावली के अनुसार दिल्ली के शासक अनंगपाल द्वितीय का पुत्र शालिवाहन (1088ई.) था। जिसकी राजधानी अलवर-जयपुर के पास बेवा पाटन थी। ये वही पाटन है, जिसका उल्लेख श्री कालीपहाड़ी करते हैं। निश्चित रूप से तंवर पांडव-कुल के हैं तथा चंद्रवंशी ही हैं। इस शालिवाहन के वंशजों' की आगे की सारी पीढ़ी तंवर वंशावली में उद्धृत है, जिसका संबंध खेड़गढ़ के गोहिलों से नहीं जुड़ता। अब यहाँ यह स्पष्ट है कि बेवा पाटन के अर्जुनवंशी शालिवाहन का समय 1088ई. है। जबकि पोकरण में 1013 ई. का पुण्यपुष्प गोहिल का शिलालेख है। जिसमें उसके गौरक्षार्थ बलिदान देने का उल्लेख है। इससे स्पष्ट है कि पांडववंशी शालिवाहन जब बेवा पाटन तक पहुँचा था उससे पहले तो गोहिल खेड़गढ़ (बाड़मेर) से पोकरण तक फैल चुके थे। इसलिए उक्त तथ्य निर्मूल है। श्री कालीपहाड़ी ने गुजरात के गोहिलों को चंद्रवंशी सिद्ध करने के लिए काफी खींचतान की है। वे आगे लिखते हैं कि ''बहीभाटों की बहियों, रासमाला, हिन्द राजस्थान आदि पुस्तकों एवं परम्परा के आधार पर गुजरात के गोहिल चंद्रवंशी हैं।'' अब यहाँ यह समझना उपयुक्त होगा कि खेड़ के गोहिलों के संदर्भ में राजस्थान के ऐतिहासिक स्रोत क्यों नहीं देखते? काश! वे मारवाड़ के गुहिलों से संबंधित शिलालेख आदि के साथ यहाँ के परिप्रेक्ष्य को समझते। वे किस परम्परा की बात कर रहे है? जिससे गुजरात के गुहिल चंद्रवंशी सिद्ध होते हैं। उन्हें गुजरात से पहले मारवाड़ के गुहिलों की बहियों को देखना चाहिए था चूंकि खेड़ भी मारवाड़ में ही है। मारवाड़ के गुहिल परम्परा में सूर्यवंशी हैं। खेड़ के गोहिलों का प्रथम सुजात शिलालेख सूर्य की स्तुति के साथ आरंभ होता है, जो इनके सूर्यवंशी होने का द्योतक है। इनके राव आज भी मेवाड़ से ही आते हैं, इनकी सारी वंशावली मारवाड़ के गोहिलों के पास सुरक्षित है, जिसका जिक्र यथायोग्य स्थान पर किया जायेगा। अब प्रश्न उठता है कि उक्त संदर्भों में कहीं पर भी अर्जुनायनों से गोहिलों का संबंध नहीं जुड़ता। जबकि कहा गया कि गोहिल पांडववंशी हैं तथा उनका संबंध पाटन-अलवर के शालिवाहन से है। जबकि उक्त संदर्भों में जिस शालिवाहन का जिक्र है, वो पैठन (महाराष्ट्र) का हैं, जिससे पाटन-अलवर के शालिवाहन से कोई संबंध नहीं है। वे स्वयं अपने एक मत पर कायम नहीं रहते। वे खुद भी स्वीकार करते हैं कि ''आगरा के गुहिल से खेड़ के गुहिलों का क्या संबंध था, साक्ष्यों के अभाव में कुछ

नहीं कहा जा सकता पर मालूम होता है आगरा के गुहिल के वंशज शालिवाहन से खेड़ के गुहिलों की शाखा अलग हुई है। और वहीं से शालिवाहन के वंशज चाटसू, नासूण (अजमेर) पर शासन करने वाले अपने भाइयों के साथ आगे बढ़े हों और आठवीं नवीं शताब्दी में खेड़ पर अपना राज्य कायम कर लिया हो।'' (क्षत्रिय दर्शन विशेषांक-पृष्ठ 218) इससे स्पष्ट होता है कि वे पुष्ट प्रमाणों के बिना केवल अनुमान के आधार पर कह रहे हैं। जब साक्ष्यों का अभाव है तो कहाँ से मालूम हुआ? यह विचारणीय प्रश्न है। मैं पूर्व में भी कह चुका हूँ कि इतिहास कपोल कल्पित कल्पनाओं व भावनाओं से नहीं चलता, वह पुष्ट प्रमाणों व संदर्भों के साथ चलता है। आगे वे शालिवाहन के बाद की वंशावली का उल्लेख करते हुए कहते हैं कि 'शालिवाहन, नरगन दनीसी (सदेवत), सुनक (उनइ), गहेड़जी, बीरमजी, रामजी, बजराणजी, सांगा व हंसराज ने खेड़ पर अधिकार किया। अब इसका हम विश्लेषण करते है तो पायेंगे कि चाटसू (जयपुर) के शिलालेखानुसार वहां के गुहिलों का वंशक्रम है भर्तृभट्ट, ईशानभट्ट, उपेंद्रभट्ट धनिक, ओक, कृष्णराज, हर्षराज। (राजस्थान के प्राचीन अभिलेख, पृष्ठ-60-600) अब तुलनात्मक अध्ययन करने पर पायेंगे कि चाटसू के गुहिल किसी शालिवाहन के वंशज नहीं है और न ही खेड़ के गुहिलों का वंशक्रम इनसे जुड़ता है और न ही चाटसू व खेड़ के गुहिलों का संबंध अर्जुनायनों से जुड़ता है। गौरीशंकर हीराचंद ओझा, गोपीनाथ शर्मा प्रभृति इतिहासकार चाटसू के गुहिलों का उत्कर्ष मेवाड़ के बापारावल के चार पीढ़ी बाद हुए मतट के पुत्र भर्तृभट्ट से मानते हैं। चाटसू के गुहिलों का शिलालेखीय वंशक्रम भी भर्तृभट्ट से ही शुरू होता है। यद्यपि इस शाखा से खेड़ के गोहिलों का कोई संबंध नहीं है।

अब गुजरात में गोहिलों को चंद्रवंशी कहने वालों की धारणा को समझते हैं। सन् 1890 ई. में गुजरात में 'गोहिल राज्यनो इतिहास' किताब प्रकाशित हुई है। गोहिलों पर केंद्रित इससे पहले कोई किताब छपी हो, मेरे ध्यान में नहीं आई। इस इतिहास कृति का प्रारंभ उस छप्पय से होता है; जिसका जिक्र ऊपर किया जा चुका है। तत्पश्चात् सेजकजी के बाद का इतिहास दिया गया है। अंत में परिशिष्ट में भावनगर के राजाओं की वंशावली दी गई है। इसे पढ़ने पर ज्ञात होता है कि यह केवल भावनगर के गोहिलों पर केंद्रित है। इसमें खेड़गढ़ की नाममात्र की जानकारी है। सेजक से पूर्व की जानकारी का लेखक के पास नितांत अभाव परिलक्षित होता है। एक छप्पय, जो खेड़ राज्य समाप्त होने के पांच सौ-छः सौ वर्ष बाद लिखा गया है, को आधार बनाकर गोहिलों को चंद्रवंशी कहने की पहल हुई है। पूरी किताब एक गाथा के रूप में है। कहीं पर भी संदर्भ का उल्लेख तक नहीं किया गया है। ऐसे में इसे इतिहास-कृति मानने के बजाय केवल लेखक द्वारा भावातिरेक में लिखी गाथा मानना समीचीन रहेगा, जिसमें पुष्ट प्रमाणों व संदर्भों का सर्वथा अभाव है। यहां प्रश्न यह भी उठता है कि परिशिष्ट में दी गई वंशावली के अनुसार पांडु पुत्र अर्जुन की दस पीढ़ी बाद शालिवाहन का नाम है, फिर खेड़ की बीस पीढ़ियाँ व बाद में सेजक से भावनगर के राजा तक की वंशावली है। अब प्रश्न उठता है कि महाभारत का समय पांच हजार वर्ष पूर्व का है। और शालिवाहन का समय 973-977 ई. है। क्या चार हजार वर्ष में केवल दस पीढ़ी ही हुई है। फिर आगे की बीस पीढ़ियां तीन-साढ़े तीन सौ वर्ष में कैसे हुई? दूसरी बात अर्जुन से शालिवाहन के मध्य गोहिल नाम का कोई व्यक्ति नहीं हुआ। फिर यह वंश गोहिल कैसे कहलाया? अतः स्पष्ट है कि इसका कोई प्रामाणिक आधार नहीं है। यहाँ यह उल्लेखित करना उपयुक्त रहेगा कि मेवाड़ के रावल शालिवाहन के वंशज हंसराज ने खेरिया भील को मारकर खेड़गढ़ राज्य की स्थापना की थी। तत्पश्चात् बीस पीढ़ी तक इनका खेड़गढ़ पर अधिकार रहा।

(शेष पृष्ठ 34 पर)

अपनी बात

जिन्दगी मिलती है–अवसर की तरह, चुनौती की तरह। जो चुनौती को स्वीकार कर लेता है, जो इस अवसर का उपयोग कर लेता है उसे परम जीवन मिल जाता है। श्री क्षत्रिय युवक संघ में प्रवेश मिला है तो इस चुनौती को स्वीकार करने वाले का जीवन आदर्श बन जाएगा। यह प्रवेश तो उस आदर्श जीवन का द्वार है। इस पर ही अटक नहीं जाना है। यह तो उस राजमहल का द्वार है, उस द्वार पर ही बैठे मत रहना नहीं तो खाली ही रह जाओगे। चुनौती तो आदर्श क्षत्रिय बनने की है। लेकिन आदर्श क्षत्रिय बनने के लिए बड़ी धूल धवांस चित्त से झाड़नी होगी। नींद और सपने छोड़ देने होंगे।

संघ हमें कुछ छोड़ने को कहता है। संसार छोड़ने को नहीं कहता सांसारिक स्वप्न छोड़ने को कहता है। परिवार, बच्चे, पत्नी छोड़ने को नहीं कहता। हमारे मन के पास मन के दर्पण के पास जो गर्द–गुबार जम गई है, जो स्वभावत: जम जाती है क्योंकि यात्रा कर रहे हैं जन्म–जन्मों से, यात्रा में यात्री के कपड़ों पर धूल जम ही जाएगी। यह स्वाभाविक है। इस धूल धवांस को झाड़ने, झाड़ने की बात कहता है। यदि यह कर सके तो पाएंगे कि भीतर तो मालिक, परमेश्वर छिपा है। खोजने वाले को ही मिलता है पर अगर भागे चले जाएँ और आँख खोलकर भीतर जरा भी टटोला नहीं तो कैसे पहुँचेंगे मालिक तक।

भीतर झांकने की कला का प्रारम्भ होता है श्रद्धा से। श्रद्धा का अर्थ है जो दिखाई नहीं पड़ता, उसकी खोज की हिम्मत। संघ साधना में गहरे उतरे बिना केवल भागते रहें तो मालिक की खोज तो प्रारम्भ ही कहाँ हुई? फल पाना है, फूल पाना है तो बीज तो बोना पड़ेगा। दिखने में बीज और कंकड़ एक जैसे दिखते हैं परन्तु बीज को बोने में श्रद्धा की भाव भंगिमा है कि यह कंकड़ नहीं है, यह फूटेगा, अंकुर निकलेगा। इसमें फूल छिपे हैं जो निकलेंगे। अभी दिखाई न देते हों पर दीखेंगे। संघ में जीवन लगाने का बीज बोया है, परिणाम की अपेक्षा है, श्रद्धा होगी तो धीरे–धीरे गहरे भी उतरेंगे। बीज को माली पानी देता है। इस साधना क्षेत्र में भी समय–समय के संघ निर्देश पानी का कार्य करते हैं अपने अन्तर में फूल खिलाने के लिए। श्रद्धा है तो हम भरोसे में हैं कि धीरज से बढते रहे तो फूल खिलेंगे।

श्रद्धा कभी निष्फल नहीं गई है। अगर निष्फल गई हो तो वह नपुंसक थी। रही ही नहीं होगी। ऊपर–ऊपर थी, झूठी थी, थोथी थी। विश्वास रहा होगा, श्रद्धा न रही होगी। विश्वास और श्रद्धा का यही भेद है। विश्वास का अर्थ है–मान लिया। लोग कहते हैं ईश्वर है, अब क्यों विवाद करें। चलो लोग कहते हैं कि ईश्वर है तो होगा हम भी विश्वास कर लेते हैं। विश्वास उधार है। श्रद्धा का अर्थ होता है, दुनिया कहती हो कि ईश्वर नहीं है, सारी दुनिया कहती हो कि मात्र कल्पना है, ईश्वर नहीं है। तब श्रद्धा कहती है मैं खोजूं मैं तलाशूं। प्यास है तो जलधार होनी ही चाहिए। जब मेरे भीतर परमात्मा को पाने की आकांक्षा है तो परमात्मा होना ही चाहिए। क्योंकि बिना परमात्मा के हुए, इस आकांक्षा का कोई स्रोत नहीं हो सकता। संघ साधना एक संगठन का निर्माण करती है, इतना ही नहीं, जीवन में निखार लाकर अन्तर की पहचान देती है, जीवन को परम बनाती है।

संघ में जो भी हो रहा है, उसमें एक अपूर्व संगति है। विराट आयोजन है। असंबद्ध नहीं हैं घटनाएँ। अस्तित्व असंगत नहीं है। अस्तित्व के भीतर चलता हुआ एक तारतम्य है, एक लयबद्धता है। अराजक नहीं है, अस्तित्व अनुशासित है। इसके अनुशासन को देखकर खयाल आ जाता है कि कहीं वे अदृश्य हाथ जरूर छुपे होंगे, जो इन पत्तों को रंग जाते हैं, फूलों को रस से भर जाते हैं, गंध से भर जाते हैं।

●

शिविर सूचना

यह सूचित करते हुए अत्यन्त हर्ष है कि श्री क्षत्रिय युवक संघ के आगामी प्रशिक्षण शिविर निम्न प्रकार से होने जा रहे हैं-

क्र.सं.	शिविर	समय	स्थान, मार्ग आदि
1.	प्रा.प्र.शि.	19.9.25 से 22.9.25 तक	**झालावाड़** मो. : 9784812312
2.	प्रा.प्र.शि.	19.9.25 से 22.9.25 तक	**भलासरिया,** जोधपुर, ओसिया तथा तिवरी से बसें **सम्पर्क सूत्र :** श्रवणसिंह भलासरिया
3.	प्रा.प्र.शि.	19.9.25 से 22.9.25 तक	भीम जी का गाँव, जिला फलोदी बाप एवं फलोदी से बसें **सम्पर्क सूत्र :** जेठूसिंह सीढा
4.	प्रा.प्र.शि.	19.9.25 से 22.9.25 तक	**सरायण,** जिला-चूरू, तारानगर से सरायण बसें। **सम्पर्क सूत्र :** वीर बहादुर सिंह सरायण-9660363445
5.	प्रा.प्र.शि.	19.9.25 से 22.9.25 तक	**सेमारी, सलूम्बर,** उदयपुर व सलूम्बर से बसें। **सम्पर्क सूत्र :** डूंगरसिंह भीमपुरा
6.	प्रा.प्र.शि.	19.9.25 से 22.9.25 तक	**चाँदेसरा, बालोतरा**
7.	प्रा.प्र.शि. (मातृशक्ति)	19.9.25 से 22.9.25 तक	**थाना, मांडल, भीलवाड़ा** मो. : 9828511107, 9928504999
8.	प्रा.प्र.शि.	19.9.25 से 22.9.25 तक	**जोबनेर, जयपुर**
9.	प्रा.प्र.शि.	20.9.25 से 23.9.25 तक	**महेन्द्रगढ़, हरियाणा**
10.	प्रा.प्र.शि.	20.9.25 से 23.9.25 तक	**जय भवानी सेवा संस्थान,** सेड़वा, बाड़मेर चौहटन से बाखासर मार्ग पर
11.	प्रा.प्र.शि.	20.9.25 से 23.9.25 तक	**जैसलमेर** (राजपूत छात्रावास)
12.	प्रा.प्र.शि.	20.9.25 से 23.9.25 तक	**राजगढ़, जैसलमेर**
13.	प्रा.प्र.शि.	20.9.25 से 23.9.25 तक	**शक्ति नगर, जैसलमेर**

14.	प्रा.प्र.शि.	20.9.25 से 23.9.25 तक	परावा, लाडनू-सुजानगढ़ से बस **सम्पर्क सूत्र :** मनोज सिंह परावा
15.	प्रा.प्र.शि.	20.9.25 से 23.9.25 तक	डूठवा, जालौर सांचौर से डूठवा बस द्वारा
16.	प्रा.प्र.शि.	20.9.25 से 23.9.25 तक	चौरू, फागी, टोंक **सम्पर्क सूत्र :** 1. भंवरसिंह जी-9828076495 2. नन्दसिंह जी-9950777131 3. रघुनाथसिंह जी-9799681868 4. रविन्द्रसिंह जी-9785864051
17.	प्रा.प्र.शि.	26.9.25 से 29.9.25 तक	**सिंगोद कला, जयपुर**
18.	प्रा.प्र.शि.	27.9.25 से 30.9.25 तक	**आकली, शिव, बाड़मेर**
19.	प्रा.प्र.शि. (मातृशक्ति)	27.9.25 से 30.9.25 तक	**विरात्रा पब्लिक स्कूल, चौहटन, बाड़मेर**
20.	प्रा.प्र.शि.	27.9.25 से 30.9.25 तक	**छायण, जैसलमेर**
21.	प्रा.प्र.शि.	27.9.25 से 30.9.25 तक	**झिंतड़ा, जोधपुर,** रोहट-पाली मार्ग पर
22.	प्रा.प्र.शि.	27.9.25 से 30.9.25 तक	**उचमत (जूना) जालौर,** जसवन्तपुरा, रेवदर मार्ग पर 2 कि.मी.
23.	प्रा.प्र.शि.	27.9.25 से 30.9.25 तक	**बायो सा माता मंदिर जीवाणा, जालौर** जालौर-बाड़मेर मार्ग पर जीवाणा उतरें।
24.	प्रा.प्र.शि.	27.9.25 से 30.9.25 तक	चरकड़ा, बीकानेर **सम्पर्क सूत्र :** रामसिंह चरकड़ा-9828090533
25.	प्रा.प्र.शि.	29.9.25 से 2.10.25 तक	**गंगापुरा (गिराब)** बाड़मेर से गिराब से गंगापुरा सड़क पर।
26.	प्रा.प्र.शि.	29.9.25 से 2.10.25 तक	**सेऊवा, जैसलमेर**
27.	प्रा.प्र.शि. (मातृशक्ति)	29.9.25 से 2.10.25 तक	**रणसी गाँव, जोधपुर** **सम्पर्क सूत्र :** 1. सवाई सिंह जी, 2. योगेन्द्र सिंह जी

28.	प्रा.प्र.शि.	29.9.25 से 2.10.25 तक	**खुमाणसर, जैसलमेर**
29.	प्रा.प्र.शि. (मातृशक्ति)	2.10.25 से 5.10.25 तक	**हरीश राघव पब्लि स्कूल सौंखरोड़, मथुरा (उ.प्र.)** **सम्पर्क सूत्र :** 9760026820, 9414211465
30.	प्रा.प्र.शि.	2.10.25 से 5.10.25 तक	**खेतला जी मंदिर घोड़, पाली**–नाडोल वाया जवली **सम्पर्क सूत्र :** कुलदीप सिंह घोड़
31.	प्रा.प्र.शि.	2.10.25 से 5.10.25 तक	**पानरवा, उदयपुर,** उदयपुर से पानरवा के लिये रोडवेज बस **सम्पर्क सूत्र :** 1. मनोहर सिंह जी, 2. परीक्षित सिंह जी
32.	प्रा.प्र.शि.	4.10.25 से 6.10.25 तक	**शक्ति माता मंदिर दिघडिया (मोरवी) गुजरात**
33.	प्रा.प्र.शि. (मातृशक्ति)	11.10.25 से 14.10.25 तक	**सरस्वती कॉलेज लिम्बोई** तह. बडगाँव, बनासकाठा, गुजरात
34.	मा.प्र.शि.	15.10.25 से 21.10.25 तक	जस्सूपुरा (धोद) सीकर मार्ग– चांदपोल सीकर से जस्सूपुरा के लिए प्राईवेट बस। **सम्पर्क सूत्र :** 7851859211

गजेन्द्र सिंह आऊ

शिविर कार्यालय प्रमुख (श्री क्षत्रिय युवक संघ)

पृष्ठ 30 का शेष

खेड़गढ़ के गोहिल राजवंश संबंधित ऐतिहासिक भ्रांतियों का निराकरण

खेड़गढ़ के अंतिम गोहिल शासक महेशदास नाबालिग थे। राव आस्थान राठौड़ ने वैवाहिक संबंध की आड में छल–छद्म से खेड़गढ़ पर अधिकार कर लिया। तत्पश्चात् राठौड़ सात–आठ पीढ़ी तक राव वीरमदेव तक खेड़ में ही थे। इसलिए उन्हें खेड़ेचा भी कहा जाता है। वीरमदेव के पुत्र चूंडा ने मंडौर को राठौड़ों का दूसरा शक्ति केंद्र बनाया। राठौड़ों का जोधपुर की स्थापना के बाद यहीं से देशभर में विस्तार हुआ। खेड़गढ़ से राज्यच्युत होने के बाद जैसलमेर होते हुए गोहिलों की एक शाखा मारवाड़ में ही रह गई और एक शाखा सेजक जी के नेतृत्व में गुजरात गई। सेजक जी ने गुजरात में सेजकपुर बसाया। उनके तीन पुत्र–राणा, शाह व सारंग हुए। जिनके वंशजों का गुजरात में खूब विस्तार हुआ। भावनगर, पालीताणा, लाठी, राजपीपला, वला आदि गोहिलों के राज्य हैं। अपने शौर्य, त्याग व बलिदान से गोहिलों ने गुजरात में अप्रतिम लोमहर्षक गाथाएं उत्कीर्ण की, जो उनके सतत संघर्षरत रहने का प्रमाण है। मारवाड़ में जोधपुर के पास 'गोहिलों की ढाणी' गोहिलों का मुख्य ठिकाना है। इसके साथ मलवा, नवातला, किलों की ढाणी, चांदसर, गोयलरी आदि गांवों से निकले गोहिल शाखाओं के बालोतरा–बाड़मेर, जैसलमेर, बीकानेर, जोधपुर आदि जिलों में पचास से अधिक गाँवों में इनका निवास है।

श्री क्षत्रिय युवक संघ के स्वयंसेवक रुद्र प्रताप सिंह ढींगसरी पुत्र श्री विक्रम सिंह ढींगसरी के सीबीएसई वेस्ट जोन बॉक्सिंग इवेंट में 91 किग्रा वर्ग में रजत पदक प्राप्त करने और नेशनल इवेंट में सलेक्शन होने पर बहुत बहुत बधाई एवं शुभकामनाएं।

रुद्र प्रताप सिंह ढींगसरी

-: शुभेच्छु :-

जयसिंह सागु ,उगम सिंह गोकुल,बहादुर सिंह छापड़ा,शिम्भु सिंह आसरवा,मनोहर सिंह दुजार,विक्रम सिंह खारी ,शैतान सिंह दांतीना, डूंगर सिंह सिंघाना,नरपतसिंह रताऊ,हिम्मत सिंह गुगरियाली,कुलदीप सिंह गुगरियाली, विजय राज सिंह सिंघाना,केशरसिंह पांचलासिद्धा,जब्बर सिंह दौलतपुरा,भोमराज सिंह छापड़ा,सोहन सिंह ऊंचाईडा,रविन्द्र सिंह ऊँचाईडा,लोकेन्द्र सिंह ऊँचाईडा,जनकपाल ऊँचाईडा,बेग सिंह दूंकर,श्याम सिंह छापड़ा,मानवेंद्र सिंह देवराठी,हरेंद्र सिंह देशवाल,प्रभु सिंह भुन्डेल,नत्थू सिंह छापड़ा,रविन्द्र सिंह जाखण,विक्रम सिंह देऊ, नरवीर सिंह छापड़ा,मदन सिंह आसरासर,मगनसिंह बरनेल, भवानी सिंह चरडास

एवं समस्त नागौर संभाग के स्वयंसेवक।

युवराज सिंह शेखावत पुत्र श्री विक्रम सिंह शेखावत (टिटनवाड़) ने चिकित्सा विभाग में चिकित्सा अधिकारी के रूप में गाँव सौंथली में कार्यभार संभाला।

शुभेच्छु :- विक्रम सिंह, बजरंग सिंह, रणजीत सिंह, गिरवर सिंह जी, कृपाल सिंह, निखिल सिंह एवं समस्त शेखावत परिवार टिटनवाड़ और जेठूसिंह बगतपुरा, ईश्वर सिंह रूपपुरा

सितम्बर सन् 2025
वर्ष : 62, अंक : 09

समाचार पत्र पंजी.संख्या R.N.7127/60
डाक पंजीयन संख्या - Jaipur City /411/2023-25

संघशक्ति
ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा,
जयपुर-302012
दूरभाष : 0141-2466353
E-mail : sanghshakti@gmail.com
Website : www.shrikys.org

श्रीमान् ....

....

....

श्री संघशक्तिप्रकाशन प्रन्यास (स्वत्वाधिकारी) के लिए मुद्रक एवं प्रकाशक राजेन्द्र सिंह राठौड़ द्वारा भास्कर प्रिंटिंग प्रेस, डी बी कोर्प लिमिटेड, प्लोट नंबर-01, मंगलम कनक वाटिका के पीछे, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, रेल्वे क्रोसिंग के पास, बिलवा, शिवदासपुरा, टोंक रोड़, जयपुर (राजस्थान)-303903 (दूरभाष -6658888) से मुद्रित एवं ए-8, तारानगर, झोटवाड़ा, जयपुर- 302012 (दूरभाष- 2466353) से प्रकाशित। संपादक राजेंद्र सिंह राठौड़ । Email : sanghshakti@gmail-com | Website : www-shrikys-org